फाँसी

प्रथमावृत्ति- २००३ वि०

प्रकाशक

अ० भा० राष्ट्रीय साहित्य

प्रकाशन परिषद्

मेरठ

मूल्य ३)

मुद्रक—

मदन मोहन बी. ए.

निष्काम प्रेस, मेरठ

पुष्पा "भारती" को :—

अँग्रेज़ी राज्य

हिन्दू और मुसलमानों के खून से रँगीन भारत-भूमि पर 'यूनियन जैक' लहरा रहा है। ब्रिटिश सम्राट् के मस्तक पर 'ज़फ़र' के खून का टीका लगा हुआ है। भारत की हड्डियों पर रक्खी हुई अंग्रेज़ी राज्य की नींव की ईंट हिल रही है। 'बन्दी बहादुरशाह' को सौगात में भेंट किये हुए 'बेटों के सर' 'इन्क़लाब ज़िन्दाबाद' के नारे लगा रहे हैं।

यह है अंग्रेज़ी राज्य का रूपक। यह है अंग्रेज़ी राज्य का खूनी इतिहास—

'प्लासी' के युद्ध में सेनापति 'मीर जाफ़र' अंग्रेज़ों से मिल गया; फलस्वरूप सन् १७५७ में बंगाल के बादशाह 'सिराजुद्दौला' को 'मौहम्मद बेग' ने धोखे से क़त्ल किया, बस तभी से भारतवर्ष में व्यापारियों का शासन शरू होता है। 'ईस्ट इण्डिया कम्पनी' ने हिन्दुस्तान के नाश का बीड़ा उठाया।

अंग्रेज़ी राज्य बर्बरता का नंगा इतिहास है, सन् १८५७ में 'बहादुरशाह ज़फ़र' को क़ैद कर 'हडसन' ने उसके दो बेटों का क़त्ल किया, दिल्ली का खूनी दर्वाज़ा इसका साक्षी है, यही नहीं, पेड़ों और सड़कों पर फाँसियाँ टाँग दी गईं, घरों में आग देदी, हिन्दुस्तानी सिपाहियों को तोपों से बाँध बाँध कर उड़ा दिया, बहिनों की दुर्दशा की,

भारत के कण कण में क़त्लेआम की धूम मच गई, छावनियाँ ख़ूनी चादरों से छा गईं ।

सच्चा इतिहास देखने से पता चलता है कि अंग्रेज़ी राज्य में प्रजा-पालन नहीं, जहां देखो, प्रजा 'त्राहि' 'त्राहि' करती दिखाई देती है । देशमुकुट पं० जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में 'अंग्रेज़ केवल गोली चलाना और कुर्सियों पर बैठना ही जानते हैं', शान्ति और सत्य इस साम्राज्य में नहीं, जहां देखो लाठी चार्ज, जहाँ देखो दुर्भिक्ष, जहां देखो फांसी, फिर भारत विद्रोह क्यों न करे, रणचण्डी की हुंकार भस्म-सात् की ज्वाला लिये क्यों न निकले ।

हम ग़ुलाम हैं, हमारा जीना ही क्या । तन ढकने के लिये कपड़ा नसीब नहीं होता, छटांक भर अन्न के लिये ठोकरें खानी पड़ती हैं । क्या किसी ने कभी किसी अंग्रेज़ को 'राशन' की दुकान पर धक्के खाते देखा है ? क्या कभी किसी अंग्रेज़ महिला को छः छः घण्टे धूप में दुखी होते देखा है ? इसके उत्तर में केवल यही कहा जा सकता है कि हम परतन्त्र हैं, अंग्रेज़ों ने हमारे घरों में हमें क़ैद कर रक्खा है । क्रान्तिकारी वीर बेड़ियाँ तोड़ने निकले थे, अंग्रेज़ों ने उन्हें फाँसियां देदीं, गोलियों से उड़ा डाला, न जाने किस किस तरह शहीदों के ख़ून से हाथ रँगे गये हैं, उन देशभक्तों के ख़ून के बदले में इतने देशभक्तों का

खून चाहिये जिससे भारत स्वाधीन हो जाये।

भारतवासियों! शहीदों के संकल्प पूरे करो, उस दिन सुख और शान्ति की श्वासें लेना जिस दिन झोंपड़ियों के बुझे हुए दीपक जलादो, शपथ खाकर प्रतिज्ञा करो कि जब तक स्वतन्त्र न होंगे एक मात्र लक्ष्य स्वाधीनता ही रहेगा।

ग़दर के बाद भारत पर अंग्रेज़ों का अधिकार अवश्य हो गया लेकिन बग़ावत की आग नहीं बुझी, दमन से विद्रोह नहीं दबा करता, क्रान्ति की भावनायें कुचली नहीं जातीं, स्वाधीनता की आग सुलगती चली गई और सुलगती जा रही है।

बंग-भंग-आन्दोलन शुरू हुआ, क्रान्तिकारी संस्था काँग्रेस का तिरंगा झण्डा लहराया, स्वतन्त्रता की भावनाओं ने उग्र रूप धारण कर शंख-ध्वनि की, उत्तर में अंग्रेज़ों ने फाँसी-घर के दर्वाज़े खोल दिये, चुन चुन कर फांसियाँ दी जाने लगीं।

देशभक्तों ने सीने खोल दिये, लाठी चार्ज सहे, गोलियाँ खाईं, फाँसियों पर झूले।

मृत्युञ्जय शक्तियाँ मौत से नहीं डरा करतीं, देशभक्त वीरों की आकांक्षा देशभक्ति की प्रतीक-प्रतिमा के आगे रक्त से अर्चना करती है, वीर सैनिक 'सर हथेली पर रख कर' ही घर से निकलते हैं, शहीद होते समय उनकी आँखों से

आँसू नहीं निकला करते, स्वाधीनता उनका आलिंगन करती है, शहीदों को विश्वास होता है कि वीर गति को प्राप्त प्राणी के लिये स्वर्ग का सिंहासन सुरक्षित है।

मुक्त शक्तियों! तुम्हारे बलिदानों से तिरंगा शान से लहरा रहा है, तुमने मौत से खेल कर उसे ऊंचा किया है, वह संसार की किसी शक्ति से नहीं झुक सकता, सेनानी 'सुभाष' ने तुम्हारे खून से रँगा हुआ झण्डा 'आसाम' की सीमा पर गाड़ कर जयहिन्द घोष से सिंह गर्जना की है, तुम्हारी चिताओं के शोलों से कण कण में स्वाधीनता की आग धधक रही है, आज सारा भारत परिवर्तन चाहता है, प्रत्येक राष्ट्र-भक्त विद्रोह का झण्डा लिये खड़ा है, शहीदों का बलिदान 'अंग्रेज़ों भारत छोड़ो' का नारा लगा रहा है।

अमर शहीदों! तुमने अपने रक्त से आज़ादी का पौधा सींचा है, देश की स्वतन्त्रता के लिये अपने प्राणों की आहुतियाँ दी हैं, राष्ट्र के लिये अपना सब कुछ बलिदान किया है। तुम धन्य हो, तुमने देश के लिये देवगति का दर्वाज़ा खोलकर स्वतन्त्रता देवी के दर्शन कराये हैं। तुम्हारे बलिदानों के गौरव-दुर्ग पर लहराता हुआ 'तिरंगा झण्डा' ब्रिटिश साम्राज्यवाद को चुनौती दे रहा है —

शहीदों की स्मृति में
१ जौलाई १६४६

क्रम

पृष्ठ

पृष्ठ

तिरंगा

तीन रँगों में बही त्रिवेणी–
पुण्य पर्व में स्नान कर चलो।
हरे श्वेत केसरिये तट पर–
तन मन धन बलिदान कर चलो॥

गंगा, यमुना, सरस्वती में –
वीरों की हड्डियां पड़ी हैं।
'पश्चिम' की छाती पर देखो –
जली हुई चूड़ियां पड़ी हैं॥

फाँसी

आज शहीदों के मरघट से–
बोल रहीं बिछुवों की रुनझुन।
आज मसानों में सोती हैं–
बिछुड़े दम्पतियों की गुन गुन ॥

अर्थी के पीछे वह देखो–
छाती धुन धुन कौन रो रही।
पड़ी दासता की कारा में,
कौन दृगों से दाग़ धो रही ॥

वह चालीस कोटि की मां है–
छाती पर अंग्रेज़ खड़े हैं।
वह भारत मां जिसके बेटे–
ज़ंजीरों में बँधे पड़े हैं ॥

चले झूमती हुई जवानी,
चले झूमता हुआ तिरंगा।
इधर ताज है, उधर मुक्ति की–
बहती हुई मिलेगी गंगा ॥

वीरों! चलो तिरंगा झण्डा–
'लाल क़िले' पर आज लगायें।
चलो शहीदों की समाधि पर–
स्वतन्त्रता का दीप जलायें ॥

ऐसे उठो, उठा करते हैं,
जैसे परिवर्त्तन के बादल।
देश प्रेम पर मिटो शलभ से–
स्वतन्त्रता दीपक पर जल जल॥

देखो, दीपक जल जल कर ही–
जग को ज्योति दिया करता है।
देखो, सूरज जल जल कर ही–
तम का नाश किया करता है॥

देखो, जो शहीद हो जाते,
उनकी जग पूजा करता है।
देखो, वृक्षों के मस्तक पर–
मिट कर बीज मुकुट धरता है॥

देखो, अगर शहीद हुए तो–
राज्य मिलेगा, मुक्ति मिलेगी।
क्षणभंगुर जीवन के बदले,
युग युग तक ज़िन्दगी खिलेगी॥

वह सेनानी आगे आये,
बुढ़िया मां से जिसे प्यार है।
यही समय है चलो जवानों!
नंगे भूखों की पुकार है॥

यह मन्दिर है, यह मस्जिद है,
यह उपासना महाशक्ति की।
यही ज़िन्दगी की परिभाषा,
यही परख है देशभक्ति की॥

तुम में 'ऊधम सिंह' बहुत हैं,
तुम में ही 'सुभाष' सेनानी।
जिसने दांत कर दिये खट्टे-
तुम में 'लक्ष्मी' लक्ष्य भवानी॥

दिन में डाका डाल रहे ये,
फिर भी तुमको होश न आया।
तुम कितने हो, ये कितने हैं,
फिर भी तुम में जोश न आया॥

'बलिया' में मिटने वालों की-
खा खा कर सौगन्ध चलो तुम।
वीर शहीदों के मरघट में-
'भगतसिंह' की तरह जलो तुम।

'जलियांवाला बाग़' न भूलो-
'काकोरी' का रक्त न भूलो।
भूलो मधु अधरों के चुम्बन,
लेकिन अपना तख़्त न भूलो॥

तिरंगा

अटल प्रतिज्ञा करके निकलो,
नहीं झुकेगा कभी तिरंगा।
'लाल क़िले' की चोटी पर चढ़—
गाड़ सकोगे तभी तिरंगा॥

तुम 'प्रताप' के, तुम 'अकबर' के—
वीर पुत्र, बढ़ चलो अगाड़ी।
आज चवालिस कोटि सुतों के-
कन्धों पर दुखिया की गाड़ी॥

खींचो, ज़ोर लगाकर खींचो,
थोड़ी दूर और चलना है।
चलना है बस 'लाल क़िले' तक,
वहां विजय दीपक जलना है॥

इतनी देर, दूर इतनी है—
बढ़ते चलो, क़दम मत रोको।
यह मंज़िल, वह लक्ष्य सामने,
चढ़ते चलो, क़दम मत रोको॥
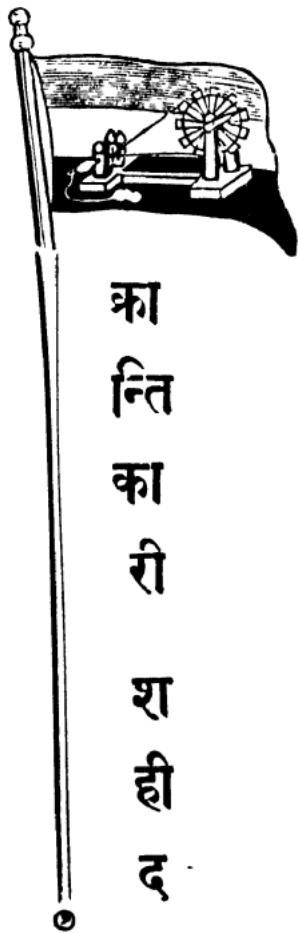
सन् १९०८ से —

शहीद 'खुदीराम बोस'

(फाँसी ११ अगस्त १६०८)

रक्तार्घ्य प्राणों से कर गये पूजा जो,
फांसी के तख्तों पर चित्रित हैं जिनके चित्र,
जिनके सर पश्चिम की सत्ता पर रक्खे हैं,
चढ़ चुके जिनके फूल—
उड़ चुकी जिनकी धूल—
लक्ष्य की मंज़िल पर,
वीरों के मन्दिर में,
उनका इतिहास ही 'क़ाबा' है, 'काशी' है,
मन्दिर है मस्जिद है,
धर्म है रोज़ा है,
साक़ी है प्याला है,
उनकी जवानी ही जग की जवानी है,
उनका बलिदान ही सूरज भविष्यत् का,
आओ यह मन्दिर है—
गायें सब उनके गीत।

अंग्रेज़ी शासन में –
रात दिन हत्या काण्ड,
रात दिन गोली काण्ड,
राज्य है या खूनी जल्लादी खाण्डा है,
भारत हमारा है, किन्तु ये अधिकारी,
अपना घर इनका राज्य–
इसलिये भारत में विद्रोह होते हैं,
चिनगारी घर घर में,
ज्वाला जवानी में,
षड्यन्त्र होते हैं,
बलिदान होते हैं,
चाहते अपना राज्य,
फैलती जाती है सब तरफ जलती आग,
अधिकारी 'किंग्सफोर्ड'–
विद्रोही वीरों को दण्ड दे बैठे थे,
और फिर जज बन कर आये मुजफ्फरबाद,
किन्तु उन युवकों में –
बाग़ी जवानों में–
ज्वाला दहकती थी,
खून के बदले की।
ज़हरीले बम लेकर –

दोषी की हत्या हेतु–
चल पड़े सैनिक दो,
आये 'मुज़फ्फ़र' पुर,
ठहरे सराय में,
ढूंढने निकले पथ,
गोला गिराने का,
खून के बदले का,

वृक्षों के झुरमुट में,
तम के कुहासों में–
छिप गये दोनों वीर,
बम की पुटलियें ले,
'चाकी' वह बाबू 'बोस'।

'किंग्सफोर्ड' जाते थे जिस रँग की गाड़ी पर–
'केनेडी' साहब की गाड़ी भी वैसी थी,

भूल से उनकी ही गाड़ी पर फेंके बम्,
जल गई गाड़ी वह,
'केनेडी'– कन्या तत्क्षण ही सिधारी स्वर्ग,
दो दिन के बाद ही मर गई पत्नी भी,

बम् जहां फेंके थे–
बन्दूक धारी दो देरहे थे पहरा—

एक थे 'फैजुद्दीन'
दूसरे 'खां साहब'
दोनों पुलिस के थे,
दोनों ने देखा था 'बोस' वह 'चाकी' को,
सामने क्लब के पास,
घूमते दिन में भी,
और फिर दोनों को भागते देखा था,
बम फेंकने के बाद,
दोनों ने दोनों को थाने में लिखवाया।

बाद उस घटना के–
सब तरफ पहरा था, गोरों का खुफिया का,
पर 'बोस' 'चाकी' तो उड़ गये पहिले ही,
दौड़े पवन से वे–
गांव में पहुँचे 'बोस',
'चाकी' समस्तीपुर।

तार वह टेलीफोन खटकाये गोरों ने–
दोनों के हुलियों की सब तरफ खबरें दीं,

एक दिन बाबू 'बोस'–
गुड़दानी लेते थे,
गुप्तचर पीछे थे,

थाने से आगई सहसा पुलिस भी और—
धोखे से पकड़े हाथ,
हथकड़ियां पहिना दीं,
बोस की जेबों में पिस्तौल निकले दो,
गोलियां कितनी ही,
क़ैद कर बालक को लाये 'मुजफ्फरपुर',
'बोस' के दर्शन को स्टेशन पर जमघट था,
वीरवर बालक ने—
सिंह गर्जना की यह—
दुश्मन पर मैंने ही गोला गिराया है,

'चाकी प्रफुल्लचन्द'
घिर गये स्टेशन पर,
लेकिन उस सैनिक ने गोलियां छोड़ीं कुछ;
कितने ही गोरे थे—
लड़ता कहां तक वह—
अन्त में अपने पर गोली चलाली एक,
छोड़ दी दुनिया यह,

और वह बालक 'बोस'—
चढ़ गया फांसी पर,
'गीता' का करता पाठ,

जननी की कहता जय,
जेल के बाहर था–
गोरों का पहरा दृढ़,
भीड़ दर्शकों की थी ।

'काली'* ने 'बोस' के शव को कराया स्नान,
मस्तक पर चन्दन का त्रिपुण्ड खींचा एक,
अर्थी पर फूलों की मालायें लटकायीं,
रक्खा चिता में शव,
अग्नि, घृत, चन्दन में हृदयों से दहकी आग,
तत्त्वों में पहुँचे तत्त्व,
तीर्थों के दर्शन सी ले गये भस्मी सब,
चांदी की डिबियों में,
सोने की डिबियों में ।

---

* कालीदास बोस वकील

शहीद 'चापेकर बन्धु'

हत्यारे 'मिस्टर रेण्ड'—
पूना दर्बार के उत्सव से निकले जब—
सहसा पिस्तौल की आवाज़ चिंघाड़ी,
'रेण्ड' की छाती में आ घुसी गोली एक,
पृथ्वी पर गिर पड़े।

'दामोदर चापेकर'—
तत्त्तण ही हुए क़ैद,
मच गई चारों ओर क्रान्ति इस घटना से।

'दामोदर चापेकर'
'बालरवि चापेकर'
'देवव्रत चापेकर'
तीन ये भाई थे।

'दामोदर' 'बाल' पर—
खून का मुकदमा था।
डरपोक साथी एक—

शामिल इन्हों में था,
मृत्यु से डर कर दुष्ट इक़बाली बन बैठा,
सरकारी गवाह वह हो गया विद्रोही,

"देवव्रत चापेकर"–
दश वर्ष का था सिर्फ़,

जननी से यह बोला–
आज हो जाने दो बलिदान मेरा भी,
चल दिया छू कर पैर,
पिस्तौल भर कर निज–
'रुद्र' के दृग जैसा–
पहुँचा अदालत में,
सरकारी गवाह को यम लोक पहुँचाया,
और फिर तीनों बन्धु–
चढ़ गये फांसी पर,
जननी वह धन्य है जिसके हों ऐसे पुत्र,
देश वह धन्य है जिसमें हों ऐसे वीर,
फिर भी गुलाम हम जाने क्यों अब तक हैं।
तीनों के रक्त ने लिख दिया सहसा यह–
फूट के शोलों से जल रहा भारतवर्ष।

शहीद 'कन्हाईलाल दत्त'

(फाँसी १० नवम्बर १६०८)

कृष्णाष्टमी के दिन–
इनका हुआ था जन्म,
त्यागों की मूर्ति थे,
भारत की कीर्ति हैं,
बी. ए. करने के बाद–
एक दिन यह कह कर चल दिये घर से 'दत्त'–
'नौकरी करने मैं 'कलकत्ते' जाता हूँ',
लेकिन वे निकले थे क्रान्ति का लेकर ध्येय।

चोटों पर चोटों से, 'बंगाल' सीमा में–
क्रान्ति की धधकी आग,
बंगाली सैनिक 'सर रख रख हथेली पर'–
लग गये विप्लव में,
वीर श्री सैनिक 'दत्त'—
प्राण-पण श्रद्धा से–
शक्ति तत्परता से–

क्रान्ति की चिनगारी बन गये कण कण में,
देश में फैलाये विप्लव के अंगारे,
क्रान्तिकारियों का केन्द्र–
'चन्द्रपुर' में था तब,
बम् फैक्ट्री थी एक,
'दत्त' भी उसमें थे,
गोरों ने घेरी वह,
मौके पर पकड़े 'दत्त',
कारा 'अलीपुर' में–
उक्त षड्यन्त्रों के, बन्द थे बन्दी सब,
कायर 'गोसाईं' एक उनके ही साथी थे,
बन्द थे लेकिन वे दूसरी बैरिक में,
मिल गये गोरों से,
'दत्त' के साथी थे 'सत्येन्द्र बसु' वर वीर,
ज्वर का बहाना कर–
खाट पर जा लेटे, अस्पताल में थे अब,
'दत्त' को पहुँचा दर्द—
खांसी से चिल्लाये,
वार्डर ने पहुँचाया उनको भी 'बसु' के पास,
'सत्येन्द्र' मिल कर यह बोले 'गोसाईं' से–
सरकारी गवाह मैं बनना चाहता हूँ,

कायर 'गोसाई' को हो गया दृढ़ निश्चय-
दूसरे दिन फिर जब आया वह 'बसु' के पास-
गुप्तचर अधिकारी अँग्रेज़ भी था साथ,
ठीक यह अवसर देख-
सहसा 'सत्येन्द्र' ने कर दिया फ़ायर एक,
घुटने में घुस गई गोली 'गोसाई' के।
लँगड़ाता चिल्लाता भागा वह बाहर को-
फ़ौरन 'कन्हाई' उठ चल दिया पीछे ही,
तत्क्षण 'कन्हाई' को गोरे ने आ पकड़ा-
लेकिन 'कन्हाई' ने गोली चलाई एक
गोरे के कानों में घुस गई गोली वह,
हाय ! हाय ! करता वह हट गया आगे से,
दौड़े 'गोसाई' के पीछे 'कन्हाई' फिर,
ज्वालामुखी थे दृग,
हाथ में पिस्टल था,
फाटक के खोले द्वार,
हट गये नम्बरदार, हट गये वार्डर सब,
भारत-विद्रोही वह आ गया आगे फिर-
बागी 'कन्हाई' ने-
एक दम द्रोही पर—
दन दन दन दन दन दन गोलियां दाग़ीं दश,

फाँसी

देश-विद्रोही वह गिर पड़ा पृथ्वी पर,
जेल-अधिकारी सब छिप गये बच बच कर,
मेज़ के नीचे जा छिप गये जेलर डर,
गोलियां बाग़ी की खतम हो गईं थीं जब–
कर लिया उनको क़ैद,
'दत्त' को फांसी दी,
'बसु' को भी फांसी दी।
मस्ती में मुस्काते जा झूले वे दोनों,

शव लेने पहुँचे लोग–
जेल के फाटक पर स्वागत को आई भीड़,
'दत्त' का देखा शव–
रो पड़े रिश्तेदार,
सहसा अंग्रेज़ एक बोला दिलासा दे–
ऐसे रण-वीर जिस देश में पैदा हों,
धन्य वह भारतवर्ष।

शहीद 'सत्येन्द्र कुमार बसु'

(फाँसी १९०८)

'मुज़फ्फ़रपुर' काण्ड से-
सारे 'बंगाल' पर—
पश्चिमी सत्ता की पड़ गई टेढ़ी दृष्टि,
पकड़े अंग्रेज़ों ने गुप्तकार्यालय सब,
कितने ही देशभक्त अड्डों पर किये क़ैद,
'सत्येन्द्र बसु' को भी पहनाई हथकड़ियां,

एक दिन कारा में-
सूचना आई यह-
'रामपुर' का 'नरेन्द्र' गोसाई द्रोही बन-
भेद खोलने को है।
सरकारी गवाह वह बन गया भय खाकर,
जिससे अनेकों को फांसी लग जायेगी,

'सत्येन्द्र बसु' ने और 'कन्हाई दत्त' ने-
विश्वासघाती के-
प्राण ले लेने का-

दृढ़ निश्चय कर डाला।
जेल में बाहर से आगये पिस्टल दो,
'सत्येन्द्र' रोगी बन जा पहुँचे अस्पताल,
पेट के दर्द का बहाना बनाकर 'दत्त'-
जा लेटे अस्पताल,

'गोसाईं' आता था प्रतिदिन ही अस्पताल,
अंग-रक्षा को साथ अँग्रेज़ आते थे,
एक दिन 'सत्येन्द्र'
रोते घबराते से—
बोले 'गोसाईं' से—
'फांसी से बचने का ढंग बतलाओ कुछ',
बोला गोसाईं यह 'इक़बाली बन जाओ,
प्राण बच जायेंगे।'
'सत्येन्द्र बसु' ने यह मान ली उसकी बात,
दूसरे दिन प्रातः आया 'गोसाईं' जब-
साथ थे दो गोरे,
कुर्ते के नीचे हाथ 'सत्येन्द्र बसु' ने कर-
मार दी गोली एक,
गोरों ने दौड़कर पकड़ा 'बसु' बालक को।
लेकिन 'कन्हाई' ने-
गोरे के हाथ पर गोली चलाई एक

हाय ! हाय ! करता वह हट गया आगे से,
हट गये पहरेदार,
डर गये नम्बरदार,
छिप गये जेलर डर,
'दत्त' बसु बालक की भूखी पिस्तौलों ने–
खाया 'गोसाईं' को।
हो गये स्वयम् फिर क़ैद।
दोनों को पृथक कर रक्खा तनहाई में,
फांसी के रोज़ आ–
बोला अंग्रेज़ एक–
'सत्येन्द्र बसु' ! चलो,
झूमता चल दिया वीर मृत्युंजय वह,
चढ़ गया फांसी पर,
जनता ने मांगा शव–
लाश पर दी न गई,
गोरों के पहरे में 'बसु' का जलाया शव।
बोलो शहीदों की जय जय जय जय जय जय।

शहीद 'मदनलाल ढींगरा'

(फाँसी जुलाई १६०६)

'इण्डिया हाउस' में-
'ढींगरा' रहते थे,
साथ थे 'सावरकर',
भारतीय युवकों की एक संस्था थी यह,
'सावरकर' वीर थे बाग़ी विलायत में,
पश्चिम की छाती पर रहते थे पिस्टल से।

एक दिन 'सावरकर' बोले 'मदन' से यह-
पृथ्वी पर रक्खो हाथ,
'ढींगरा' सैनिक ने रख दिया कहते ही,
'सावरकर' वीर ने सूवा निकाला तेज़-
सैनिक के हाथ में ज़ोरों से मारा वह,
चीर कर हाथ को घुस गया पृथ्वी में-
लेकिन तनिक भी हाथ कांपा न धरती पर-
'सावरकर' वीर ने सूवा फिर खींचा वह-
और फिर सैनिक को-

छाती से चिपटाया,
हाथ में पट्टी बांध, कह उठे धन ! हो धन्य !
उन्नीस सौ नौ की पहली जुलाई को—
'जहांगीर हाउस' में—
'करज़न' पधारे जब—
'ढींगरा' वीर ने कर दिये फायर दो—
पी गईं 'करज़न' के प्राण वे दो गोली,
गिर पड़े पृथ्वी पर,
मच गया हाहाकार,
कितने ही गोरों ने—
बांधा उस बालक को,
न्याय के अवसर पर बोले अदालत में—
उस दिन अँग्रेज़ एक मैंने ही मारा है,
लेकिन यह बदला है 'भारत के शोणित का,
'सत्येन्द्र बसु' का और 'कन्हाई दत्त' का,
फांसियां देते हैं जिनको अँग्रेज़ रोज़—
उनका प्रतिशोध यह ।
जननी की भेंट मैं करता हूँ अपना सर—
पुत्र के पास और रक्खा ही क्या है आज—
रक्त है उससे ही अर्चना करता हूँ ।
भारत से पश्चिमी सत्ता उठाने को—

फाँसी

भारत के सिंहों को मरना सिखाता हूँ,
मरना सिखाने को मरता हूँ आज मैं।
आख़िर अदालत ने फांसी की सज़ा दी –
वीर ने रक्त से तख़्त की हिलाई ईंट–
चढ़ गये फांसी पर,
गा 'बन्दे मातरम्'।

शहीद 'मास्टर अमीरचन्द'

क्रान्तिकारियों की खोज-
गुप्तचर पुलिस ने की,
ग्राम ग्राम, घर घर में,
शहरों में, रेलों में ।
'मास्टर अमीरचन्द'-
दिल्ली में रहते थे,
ली गई इनके भी घर की तलाशी तब,
खोज में मिल गये षड्यन्त्रकारी पत्र,
एक बम् टोपीदार,
लिबर्टी लीफ्लैट (Liberty leaflet) लिखने के दण्ड में-
आपको पकड़ा था,
उसमें यह लेख था—
"भारतीय इतने हैं-
तोपें अंग्रेज़ों की छीन सब सकते हैं,
करदें बग़ावत वे—

क्रान्ति कर छीनें राज्य'',
अंग्रेज़ी हाथों की कठपुतली न्यायों ने–
'मास्टर साहब' को फांसी की सज़ा दी ।

आपका दत्तक पुत्र–
सरकारी गवाह था,
गोद के बेटे ने–
जब दी गवाही तब–
'मास्टर साहब' की आंखें भर आईं थीं,
हृदय से करते थे जिसको वे प्यार हाय !
खून का प्यासा वह बन गया हत्यारा,
मानवता कैसे फिर आंखों में पीती अश्रु,
टूटी दृढ़ अन्तर की दृढ़ता उस घटना से,
बेटे के पैशाचिक-काण्डों से रो पड़े–
हँस दिये लेकिन ये फांसी का सुनकर दण्ड–
गौने की रजनी से,
चूमते जैसे पति पत्नी को पहली रात–
वैसे ही जा चूमी फांसी की डोर वह ।

शहीद 'अवध बिहारी'

क्रान्तिकारियों के गुट-
सर्व प्रान्तों में थे,
सेनानी 'अवधवीर'-
सारे पंजाब का नेतृत्व करते थे।
दृढ़ थे विचारों के,
भक्त थे ईश्वर के,
'मास्टर' साहब* के घर पर हुए थे क़ैद।

इन पर मुक़दमे में अपराध तेरह थे,
बम् फेंकने का दोष,
विद्रोह करने का,
'लाहौर' में बम् की टोपी लगाने का,
और भी ऐसे ही-

न्याय में फांसी का इनको सुनाया दण्ड,
फांसी के रोज़ वीर-
स्नान कर, पूजा कर-

---

* मास्टर अमीर चन्द

फाँसी

सूली पर चढ़ने को–
तैयार बैठे थे।
आया अंग्रेज़ एक–
बोला 'तैयार हो!'
गर्ज कर बोले ये–
'हां हां तैयार हूँ।'
बोला अंग्रेज़ फिर–
'अन्तिम क्या इच्छा है ?'
बोले ये 'अंग्रेज़ी राज्य हो नष्ट भ्रष्ट,
कण कण में क्रान्ति के अंगारे सुलगाओ–
भस्मी ही भस्मी के ढेर रह जायें शेष,
उसमें से निकले फिर–
कुन्दन बन भारतवर्ष।'
कूद कर फांसी पर चढ़ गये कह कर यह।

शहीद 'भाई बालमुकुन्द'

'ओडायर' साहब ने सत्ता सँभाली जब –
उनको बताया यह–
कण कण में व्याप्त है –
क्रान्तिकारियों का दल,
सारे पंजाब में ज्वालामुखी है एक –
चिनगारी लगने की देर है उसमें सिर्फ,
दूसरे ही दिन यह सूचना आ पहुँची –
'लार्ड हार्डिंग' पर बम गिर गया दिल्ली में,
सब जगह मच गई हलचल इस घटना से,
दिल्ली में लग गईं तोपें सरकार की,
लेकिन बम फेंकने वाला न आया हाथ,
कुछ दिन के बाद ही –
गोरों की सभा में –
लाहौर में फूटा बम् ।
तब भी बम फेंकने वाला न आया हाथ ।

कुछ क्रान्तिकारी लोग पकड़े सरकार ने,
उनमें से एक ने भेद सब बतलाया,
जोधपुर रियासत से 'भाई' भी पकड़े तब।
इनकी तलाशी ली–
कमरे की छत खोदी,
फ़र्श खोद डाला सब–
दो तीन बम निकले।

ख़ूनी अभियोग था इन पर अदालत में,
कोई भी साथ को पास तक न आता था,
डरते थे लोग सब,
राय तक न देते थे,
'भाई' के साथी थे भाई बस 'परमानन्द',
वे ही मुकदमे में पैरवी करते थे,
आख़िर अदालत ने मृत्यु-दण्ड ही दिया,
दण्ड सुन हँस कर ये बोले अदालत में–
स्वर्ग में जाता हूँ निज पूर्वजों के पास।

'भाई' की पत्नी के प्राण थे केवल पति–
प्यार की प्रतिमा थी,
जेल में आई जब मिलने वह पति के पास –
सूखे से ओठों से, मीठी सी वाणी में–

बोली वह तड़पन सी–
'नाथ ! क्या खाते हो ?'
कह दिया क़ैदी ने–
'रोटियां रेतीली ।'
घर आकर पत्नी ने चून में डाला रेत–
रोटियां रेतीली लग गई खाने वह,
फिर मिली, फिर पूछा–
'सोते कहां हो नाथ !
ओढ़ते क्या हो प्रभु !'
उत्तर में बोले वे–
'ढूले पर सोता हूँ,
ओढ़ता कम्बल हूँ',
घर आकर वैसे ही लग गई सोने वह ।

खूनी दिन आ पहुँचा,
जैसे स्वयंवर में कण्ठ में पड़ता हार–
वैसे ही फांसी ने जयमाला पहिनादी,
पहुँची सती के पास सूचना फांसी की–
फ़ौरन चिता में जल जा पहुँची पति के पास,
जल गये दोनों पर शेष यह आशा है–
स्वाधीन भारत हो !

शहीद 'बसन्तोकुमार विश्वास'

'विश्वास' आशा दृढ़ -
क्रान्तिकारी के घर रहते थे देहरादून,
दुनिया के सामने साथी के नौकर थे -
छिप छिप कर गैस बम् तैयार करते थे,
'भाई'* के साथी थे,
'बोस'† के साथी थे,
ताण्डव थे, विप्लव थे,
सारे पंजाब में संगठन करते थे,
सुनते हैं दिल्ली में -
'लार्ड हार्डिंग' पर बम फेंका इन्होंने था,
लाहौर में 'लारैंस गार्डन सभा' में बम् -
रक्खा इन्होंने था,
पकड़ा इन्हों को जब पास निकले दो बम्,
लाहौर अदालत ने -

---

* भाई बालमुकुन्द
† रास बिहारी बोस

शहीद बसन्तोकुमार विश्वास

कालेपानी का दण्ड दे दिया सैनिक को,
लेकिन 'ओडायर' ने इसकी अपील की –
इच्छा प्रकट की यह फांसी का देदो दण्ड,
क्योंकि वह डरता था उसके पिस्तौलों से,
ज़हरीले गोलों से,
'ओडायर' साहब के मत से अदालत ने–
फांसी की सज़ा दी।
उस समय इनकी आयु तेईस वर्ष की थी।
अब तो अमर हैं वीर।

शहीद 'भाई भागसिंह'

सैनिक परिवार में–
निर्धन परिवार में–
इनका हुआ था जन्म,
पहिले ये सेना में नौकरी करते थे,
चार अँग्रेज़ों से हो गई अनबन कुछ,
आत्माभिमान जागा, जल उठे गुस्से से,
अपनी गुलामी का खिँच गया आगे चित्र,
नौकरी त्यागी वह,
चल दिये 'कैनेडा'
मिल गये वहां पर कुछ भारतीय युवक और,
उत्साही युवको का बन गया दृढ़तर गुट,
'कैनेडा' वालों की दृष्टि में खटका यह,
भारतीय युवकों पर–
करते थे अत्याचार,
शव हिन्दुओं के वे दफ़नाया करते थे–

जलने न देते थे,
मन्दिर या गुरुद्वारा दर्शन तक को न था,
भारतीय युवकों ने पृथ्वी ख़रीदी कुछ—
मरघट बनाया एक,
गुरुद्वारा बनवाया।

'इमिग्रेशन' वाले देख उन्नति यह जल उठे,
नियम यह बनाया एक—
कोई भी 'भारतीय' 'कैनेडा' आ न सके।
जितने वहां हैं वे रहते रहेंगे अब।
इसके विरोध में—
भारतीय युवकों की आवाज़ चिंघाड़ी,
'इमिग्रेशन' वाले और हो गये इससे क्रुद्ध।
भारतीय युवकों ने कर लिया निश्चय यह—
तन, मन, धन, बुद्धि से लड़ते रहेंगे हम,
इनके सहयोग से—
'विप्लव' अख़बार एक निकला 'अमेरिका' से,
उसकी विधि, उसकी नीति—
भारत की उन्नति थी।
विद्रोही युवकों ने—
'कैनेडा' वालों से साहस से टक्कर ली,
स्वाधीनता की आग फूंक दी घर घर में,

"कैनेडा" वालों ने–
मौत की धमकी दी।
हँस कर उड़ादी वह बात इस सैनिक ने।
एक दिन 'भारत भक्त' करते थे पूजा–पाठ,
अरदास करने को माथा झुकाया जब–
पीछे से दुश्मन ने गोली चला डाली,
फेफड़ा फाड़ कर घुस गईं आंतों में–
गोलियां ज़हरीली।
घातक षड्यन्त्र से बच कर निकल भागा,
प्यासी बलिवेदी पर चढ़ गया पावन रक्त,
वीर सेनानी की अन्तिम यह आशा थी,
'मरना चाहता था करके मैं दो दो हाथ।'

शहीद 'वतनसिंह'

सिक्खों का रक्त वह–
बरछी था भाला था,
वृद्ध था, लेकिन था आवेश यौवन का,
देश पर जिनके प्राण हो गये न्यौछावर,
धर्म पर जिनका रक्त चढ़ गया चन्दन सा,

'कैनेडा' देश में–
'भागसिंह' सैनिक पर–
गोली चलाई जब–
हत्यारे ख़ूनी को दौड़े पकड़ने ये,
लेकिन उस ख़ूनी ने इन पर भी किये वार–
घुस गईं छः या सात गोलियां गुर्दे में,
साथी की रक्षा में–
दे दिये अपने प्राण ।

शहीद 'मेवासिंह'

एक दिन अदालत में–
'इमिग्रेशन' टोली के–
मुख्य अधिकारी 'हॉपकिन्सन' पधारे जब–
सामने आ पहुँचे सिंह से 'मेवासिंह',
हाथ में पिस्टल थी,
लाल लाल आंखें थीं,
धांय से सीने में मार दी गोली एक,
'हॉपकिन्सन' के प्राण पी गई गोली वह,
पृथ्वी पर गिर पड़ा खूनी हत्यारा वह,
डर डर कर लोग सब भागे अदालत से,
पर 'मेवासिंह' ने सान्त्वना सब को दी,
गर्ज कर यह कहा–
'प्रतिशोध लेना था 'हॉपकिन्सन' से सिर्फ,
भारत के वीरों का इसने पिया था रक्त,
ठहरो सब !'

कह कर यह रख दिया पिस्तौल कुर्सी पर,
बोले पुलिस से यह–
'आओ अब कर लो क़ैद।'

वीर के दर्शन को–
'हॉपकिन्सन' की मेम–
आई अदालत में,
और उस देवी ने 'सिंह' को बधाई दी,
निर्भीक भावुक वह चढ़ गया फांसी पर।

शहीद 'यतीन्द्रनाथ मुकर्जी'

(पुलिस से युद्ध करते हुए १६१५)

निर्भीक भावुक थे,
घोड़े पर चढ़ते थे,
लाखों में लड़ते थे,
'रास' के दल से भिन्न इनका भी दल था एक,*
'रास' के दल के पास धन की कमी थी कुछ–
बाग़ी 'मुकर्जी' ने पूर्ति की धन की वह ।

एक दिन दो दल की सम्मिलित बैठक थी–
और उस बैठक में गुप्तचर भी था एक–
पहिचाना गया वह,
सहसा 'मुकर्जी' ने कर दिया उसको 'शूट' ।

पीछे पुलिस थी अब,
धर पकड़ चलती थी,
गोलियां चलती थीं,
आज इस अड्डे पर छापा पुलिस का है,

---

* रास बिहारी बोस

कल किसी घर में जा–
ढूँढती 'मुकर्जी' को,
एक दिन अड्डे पर–
घिर गया बाग़ी दल,
वे थे हज़ारों और ये थे बिचारे चार,
रजनी अँधेरी थी,
छिप गये चारों ये ओट टेकड़ी की ले,
भर भर कर पिस्तौलें,
आ गये मैजिस्ट्रेट,
आ गये थानेदार,
फेंकते 'लाइट सर्च',
गांव वाले थे साथ,
साथ थे गोरे भी।

छिड़ गया भीषण युद्ध—
छाया धुँए से नभ,
चार सिंहों के स्वर–
जंगल में चिंघाड़े,
विप्लवी करते थे पृथ्वी पर लेटे वार।
पिस्तौलें चिंघाड़ीं,
बन्दूकें चिंघाड़ीं,
चार विप्लवी थे वे–

मर गये रण में दो,
शेष दो घायल थे,
गोलियां भी थीं ख़त्म,
और वे दोनों भी दो चार दिन के थे।

साथी 'मुकर्जी' से बोला तड़प कर यह—
'पानी चाहता हूँ',
इतने में गोरों ने कर लिये दोनों क़ैद;
चारों तरफ़ थी पुलिस,
अंग्रेज़ी अफ़सर से बोले 'मुकर्जी' यह—
'प्यासा है मेरा मित्र',
टोपी में भर लाया पानी सिपाही एक,
पीते ही पानी वह चल दिया दुनिया से,
रो पड़े 'मुकर्जी' तब,
रो पड़ी पुलिस भी वह,
उस दिन से दो दिन बाद—
चल दिये 'मुकर्जी' भी,
जय हो 'मुकर्जी' की,
जय जय 'मुकर्जी' की।

शहीद विष्णुगणेश पिंगले

(फाँसी १६ नवम्बर १६१६)

प्रलयंकर 'शंकर' के दृग जैसे जिसके दृग-
ज्वाला उगलते थे,
जैसे जल प्लावन में लहरें उमड़ती हैं-
वैसे ही 'पिंगले' की उठती जवानी थी।

पहुँचे 'बंगाल' ये-
अग्नि बम बनवाये,
यन्त्र बनवाये कुछ,
शक्तियां मिलाईं सब,
'बोस'* से आज्ञा ले आ धमके 'मेरठ' वीर,
फौजों में घुस कर आग भड़काई विप्लव की,
फौजी सरदारों से मिल कर यह तय किया-
निश्चित समय पर सब विद्रोह कर देंगे,
फौजी सरदार एक 'काशी' तक गया साथ,
'कलकत्ते' गया साथ,
घुल गया 'पिंगले' में,

---

* रास बिहारी बोस

'बोस' सेनानी के पास फिर पहुँचे 'विष्णु',
बातें बताईं सब,
सुन कर यह बोले 'बोस'-
फौजी सरदार से रहना तुम सावधान,
मेरी यह अनुमति है छोड़ दो उसका साथ,
लेकिन था 'पिंगले' को उस पर विश्वास पूर्ण,
अतएव दश बम् ले आगये 'मेरठ' वे,
कहते हैं वैज्ञानिक-
एक एक बम् की शक्ति-
ज्वालामुखी सी थी,
लेकिन जब छावनी पहुँचे वर 'विष्णु' वीर-
फौजी सरदार ने करवाया इनको क़ैद,
'बोस' सेनानी का निकला अनुमान सत्य।

सोलह नवम्बर को-
'फांसी' के पास जब लाये मृत्युंजय को-
पूछा यह 'कुछ कहना सुनना चाहते हो?'
बोले ये, 'कह चुका कहना था जिससे जो,
कहना है केवल बस इतना भगवान से-
'भारत स्वाधीन हो',
और फिर मुस्काकर चढ़ गये फांसी पर,

शहीद विष्णुगणेश पिँगले

दो क्षण के बाद ही रह गई मिट्टी शेष,
हो गये 'पिँगले' मुक्त–
भारत के बन्धन अब तोड़ने बाक़ी हैं–
तोड़ो सब होकर एक।

शहीद 'तरुण करतार सिंह'

(फाँसी १६१६)

वीर विद्रोही वह–
विप्लव की ज्वाला था,
सिंह सिंहनी का था,
आत्मविश्वासी था,
दुखियों की आशा था,
उसके उपहास से तंग थे सहपाठी,
नस नस में भारत-प्रेम शक्ति सा तरंगित था,
रग रग में तरुण-रक्त बहता था खौल खौल।

'अमेरिका' गये आप–
'अमेरिकन' भारत की खिल्ली उड़ाते थे,
भारत गुलाम है, भारत गुलाम है–
'तरुण' के कानों में गाया हृदय ने गीत,
अपनी गुलामी देख हो गये पागल से–
भारत के 'तरुण' भक्त,
आखिर षड्यन्त्र रच अपना बनाया गुट्ट,

निश्चय यह कर लिया–
या तो आज़ाद हम कर देंगे भारत को–
अन्यथा मृत्यु की गोदी में सोयेंगे,
जब तक गुलामी से भारत न छूटेगा–
लड़ते रहेंगे हम,
विद्रोह करने को बन गया बाग़ी दल।

विद्रोही 'तरुण' का निकला 'अमेरिका' से–
विद्रोही 'ग़दर' पत्र,
छापते स्वयम् ही थे,
बांटते स्वयम् ही थे,
जिससे लगाते थे क्रान्ति की चिनगारी,

सन् उन्नीस सौ चौदह में लौटे ये–
भारत अमेरिका से,
पंजाब पहुँचे ये,
विद्रोही हो गये मिल कर इकट्ठे सब,
सैनिक 'सचीन्द्र नाथ',
'विष्णुगणेश वीर पिँगले' भी साथी थे,
'बोस'* थे सेनापति।

शस्त्रों के लिये कुछ धन की ज़रूरत थी–

---

* रास बिहारी बोस

अतएव डाला एक डाका इन्होंने मिल,
दल के अध्यक्ष थे-
सेनानी 'तरुण' सिंह,
वीर की वह घटना अद्भुत अलौकिक है।

डालने डाका ये पहुँचे किसी के घर,
चढ़ गये छत पर 'तरुण',
शून्य में अम्बर में गोलियां छोड़ीं कुछ—
घुस गये घरों में सब,
दन दन के सुन सुन नाद,
वीरवर सेनानी चाहता नहीं था खून,
देश की रक्षा हेतु धन लेने आया था।

जिस घर में डाका ये डालने पहुँचे थे-
विधवा का घर था वह,
उसकी थी कन्या एक,
सोलह वर्ष की थी वह,
कहते हैं वह लड़की अत्यन्त सुन्दर थी,
षड्यन्त्रकारी एक जा पहुँचा उसके पास,
गर्दन में बाहें डाल खींचा उस देवी को,
चीखी वह ज़ोर से,
चीत्कार कन्या का पहुँचा 'तरुण' के पास,

पिस्तौल ताने निज आ गये नीचे वे–
दुष्ट के आगे जा–
मस्तक पर पिस्टल का लक्ष्य कर बोले सिंह–
पापी यह तेरा अक्षम्य पाप है,
माफ कर सकती है तुझको यह कन्या ही,
अन्यथा ले लूँगा प्राण मैं तेरे दुष्ट।
दोषी के हाथ से गिर गया उसका शस्त्र–
डर कर वह कन्या के पैरों पर गिर पड़ा,
कन्या की मां ने माफ कर दिया दोषी को।
बोली 'तरुण' से यह–
'बेटे ! तुम कितने धर्मात्मा पुत्र हो–
फिर ऐसा नीच कृत्य करते हो किस लिये।'
बोले 'करतार' यह–
'देश की आज़ादी शस्त्रों से लेनी है,
अस्त्रों के लिये धन चाहिये हम को मां !
इस लिये डाला है डाका मां ! तेरे घर।'
सुन कर यह मां के नयन प्रेम से भर आये,
रोती सी यह बोली–
'बेटे ! इस कन्या की शादी है जाड़ों में–
शादी के लिये कुछ छोड़ दो गहने तुम,
छोड़ दो थोड़ा द्रव्य।'

यह सुन कर 'तरुण' की आंखों में आया जल,
बोला, 'लो, ले लो मां ! चाहिये जितना धन,'
बोला, 'मां ! कर दो दान जितना भी चाहो धन।'
यह कह कर फैलादी झोली 'करतार' ने।
जननी ने सारा धन दे दिया हाथों से,
पांच सौ मुद्रा सिर्फ शादी के लिये लीं,
इस तरह लाये धन।

विद्रोह करने का षडयन्त्र रच डाला,
फौजी सरदारों से मिल गये जा कर ये,
फौजी अध्यक्ष से कर लिया निश्चय यह—
कब्ज़े में कर लेगा अपने वह 'मेगज़ीन',
तालियां दे देगा अस्त्रालयों की वह,
लेकिन न जाने कौन ग़द्दार बन बैठा—
खुल गया सारा भेद,
कब्ज़े में कर लिये शस्त्र अंग्रेज़ों ने।

फिर से कुचक्रों में लग गये सेनानी,
'पिँगले' को लेकर साथ पहुँचे फिर फौजों में,
फौजी सरदार से मिल कर यह तय किया—
एक दिन सारे ही भारत में होगा ग़दर,
शस्त्रों पर सब मिल कर कर लेंगे कब्ज़ा पूर्व,

फूंकेंगे 'मेगज़ीन',
दुर्ग पर तिरंगा गाड़ जयगीत गायेंगे।
लेकिन जिस दिन की तिथि निश्चित थी क्रान्ति हेतु—
उस दिन की सूचना लग गई गोरों को,
अतएव दो दिन पूर्व रक्खी ग़दर की तिथि,

सेनापति 'तरुण' वीर—
साठ सैनिकों के साथ—
पहुँचे 'फीरोज़पुर'—
निश्चित जगह पर ये विद्रोही अड़ गये,
छावनी से कुछ दूर—
आया वह हवलदार—
जिससे ये मिले थे,
बोला यह घबराकर—
'हम में से कोई है गोरों का गुप्तचर,
खुल गया सारा भेद,
भारतीय फौजों से ले लिये सारे शस्त्र,
क़ैद अंग्रेज़ों ने कर लिये फौजी कुछ,
जैसे भी बच पाओ बच कर निकल भागो।'
"करतारसिंह" के मान मर गये यह सुन कर,
रच कर षड्यन्त्र सब बच कर निकल भागे,
आशा निराशा में हो गई परिवर्तित।

छिप छिप 'तरुण' ने फिर षड्यन्त्र रच डाला,
लेकिन ग़द्दार ने-
खोला वह गुप्त भेद,
आख़िर 'सरगोधा' में हो गये बन्दी ये,
स्टेशन पर आये जब-
बोले पुलिस से यह-
'खाने को लाओ कुछ !'
धन्य तरुणाई वह, धन्य वह निर्भयता

जेल में भी ये एक षड्यन्त्र रच बैठे,
लोहा काटने का यन्त्र-
मँगवाया तिकड़म से,
बाहर भी साथी कुछ रक्षा को तत्पर थे,
तीस क़ैदियों ने मिल निश्चय किया था यह-
जितने भी क़ैदी हैं सब को करेंगे मुक्त,
तोड़ेंगे जेल और विद्रोह कर देंगे ।
किन्तु एक साधारण क़ैदी ने सुन लिया-
कह दिया जेलर से,
कारा के चारों ओर लग गया दृढ़ पहरा,
षड्यंत्रकारी सब-
डाले तनहाई में,
बेड़ियां पहनादीं,

शहीद तरुण करतारसिंह

आख़िर मुक़दमे में-
फांसी का मिला दण्ड,
सुन कर यह सज़ा वीर-
बोले जज साहब से-
'थैंक यू (*Thank you*) जज साहब !'
फांसी से पूर्व जब मिलने कुछ आये मित्र-
बोले 'तरुण' से यह—
'छोड़ कर जाते हो साथ हम सबका तुम',
साहस से बोले सिंह-
बोलो, 'कहां है वह ?'
(उत्तर—)
'मर गया हैज़े से ।'
'और वह कहां पर है ?'
(उत्तर—)
'मर गया सड़ सड़ कर ।'
'तब क्या चाहते थे-
वर्षों तक खटिया पर सड़ सड़ कर मरता मैं ?'
चित्रित से रह गये सुन कर यह सब साथी,
और वह सेनानी चढ़ गया फांसी पर-
उसका बलिदान वह
घर घर का दीपक है ।

शहीद 'गन्धासिंह'

(फार्मा १६१६)

'ग़दर' संस्था थी एक-
जिसके ये नेता थे,
इनके पवन से स्वर-
हर तरफ विप्लव की ज्वाला जगाते थे।

एक दिन जाते थे-
साथ साथियों के ये-
घेरा पुलिस ने आ-
और एक साथी के चांटा लगाया एक,
ऐसे व्यवहार से 'गन्धा' को आया रोष-
क्रोध से पीसे दांत-
फौरन निज पिस्टल का उसको बनाया लक्ष्य,
हत्यारा थानेदार गिर गया पृथ्वी पर,
धूलि में लोटी 'लाल पगड़ी' अभिमानी वह,
दोनों तरफ से फिर तन गईं पिस्तौलें-
और भी सिपाही कुछ सो गये सुख की नींद।
बाकी पुलिस ने घुस ईखों में रक्षा की।
उस हत्याकाण्ड में-

कर लिया गोरों ने सात व्यक्तियों को क़ैद–
शेष सब बच निकले,
छिप गये 'गन्धासिंह'–
गांव के पूलों में,
और वे सातों वीर निर्दोषी साथी थे,
सातों निहत्थे थे–
लेकिन उन सातों का पी गये गोरे रक्त,
जिनमें से एक वीर 'रहमत अली' भी थे।

सुलगाई 'गन्धा' ने–
विप्लव की ज्वाला फिर,
बाग़ी बनाये कुछ–
तान कर सीने ये सामने फिरते थे,
हत्यारी पुलिस तक भी थर्राया करती थी,
साहस न करती थी उसको पकड़ने का।

विश्वासघाती एक हो गया इनका मित्र–
एक दिन उसके साथ–
चल दिये एकाकी,
पहुँचे जब कुछ ही दूर–
आकर कुछ औरों ने घेरा निहत्थे को,
'गन्धा' को किया क़ैद,
और उस साथी ने 'गन्धा' के बांधे हाथ,

जंगल के राजा को पिँजरे में डाला यूँ,
मारा पुलिस ने फिर–
नंगा कर कोड़ों से।

जिसमें उन सातों को दे चुके फांसी थे–
ख़ून का मुकदमा वह–
इन पर चलाया फिर,

'सिंह' सेनानी को–
फांसी का दिया दण्ड।
मिलने जब आये मित्र–
बोले तब उनसे ये–
'बांध कर दैत्यों ने डाला तनहाई में,
सूज कर जिससे हाथ हो गये जंघा से।'
फांसी के रोज़ ये फिरते थे नौशे से,
पूछा किसी ने यह–
'कैसे हो गन्धासिंह ?'
मुस्का कर बोले ये–
'यारों! मज़े में हूं,
बाट देखता था मैं–
वर्षों से इस दिन की',
गेंद खेलते से ये चढ़ गये फांसी पर।

तीन शहीद

(गोलियों से १६१६)

गोरों से दो दो हाथ करना चाहते थे,
इसलिये लिखवाया क्रन्तिकारियों में नाम,
एक दिन जाते थे, तांगे में बैठे ये–
दो साथियों के साथ,
इतने में तीनों को घेरा पुलिस ने आ,
मौत के मुँह में जब फँस गये सहसा ये–
तीनों ने बीसों पर गोली चला डाली,
'लाल पगड़ियों' ने भी तान लीं बन्दूकें,
दोनों तरफ़ से फिर दन दन के गूँजे नाद,
एक इन तीनों में गोली का बना लक्ष्य,
वीर गति कर ली प्राप्त,
सच्चे सिपाही दो–
गोरों ने किये क़ैद,
और फिर फांसी पर लटका कर हत्या की।

शहीद 'रंगासिंह'

(फाँसी १६१६)

धू धू कर जल उठा भारत में विप्लव यज्ञ–
कितने ही वीरों ने शोणित की आहुति दी,
उनमें से एक हैं विद्रोही 'रंगासिंह',
क्रान्तिकारियों में ये उत्साही सैनिक थे।

विप्लव का भेद जब लग गया गोरों को–
कर लिये बाग़ी क़ैद।
तब इस बहादुर ने तदबीर सोची यह–
तोड़ कर बन्दीगृह सब को छुड़ालें हम।

सेना बनाई एक,
तय किया पहिले चल शत्रु से छीनें शस्त्र,
फूकें फिर 'मेगज़ीन'।

एक दिन घुस गये थाने में विद्रोही,
मारे सिपाही कुछ,
छीन लीं बन्दूकें,
काट कर टेलीफून उड़ गये विद्रोही,
एक दिन आ ठहरे होटल में 'रंगासिंह',
कर दिया गोरों ने हमला अचानक ही,
कर लिया इनको क़ैद,
फांसी पर लटकाया।

शहीद 'वीरसिंह'

(फांसी १६१६)

स्वाधीनता का युद्ध छिड़ गया भारत में,
गुरिल्ला प्रणाली से,
विप्लवी वीरों ने शोणित से खेला खेल,
फांसी के तख़्तों को रँग गये लोहू से,
उनमें से एक हैं 'वीर' वर विद्रोही,
चल दिये दुनिया से–
ख़ून से होली खेल।

एक दिन करते थे स्नान जब घर पर ये,
घेरा पुलिस ने आ,
कर लिया इनको क़ैद।

'लाहौर' अदालत में इनका मुक़दमा था,
कितने ही क़त्लों में सौ बाग़ी क़ैद थे,
जिनमें से कितने ही लटकाये फांसी पर,
मुक्ति ने पूजा की सच्चे शहीदों की।

जैसे पकड़ता है सर्प को बच्चा दौड़–
वीर ने ऐसे ही कूद कर तख़्ते पर,
डाल ली गले में डोर,
दुनिया में रह गई उसकी कहानी शेष,
उसकी जवानी शेष।

शहीद 'उत्तमसिंह'

'ग़दर' संस्था के ये–
अधिकारी सैनिक थे,
'पिँगले'* के साथी थे ।

'करतारसिंह' ने जब–
विद्रोह करने को–
आगे बढ़ाया पग,
साथ थे ये भी तब,
छावनी पहुँचे थे,
लेकिन उस विप्लव का खुल गया पहिले भेद,
हो गई असफल क्रान्ति,
पकड़ा अनेकों को ।

बाकी ग़दर दल ने
तदबीर सोची यह–
छीनें पुलिस से शस्त्र,
और फिर धावा कर–

---

* विष्णु गणेश पिँगले

जेल पर जा पहुँचें।
उक्त निश्चय के साथ–
वीरवर 'उत्तमसिंह'–
चार छः सैनिक ले–
जा पहुँचे थाने में,
लूट लीं बन्दूकें,
गोलियां कितनी ही,
रायफ़ल पन्द्रह बीस।

एक दिन कुटिया में–
वेश में साधू के–
जेल पर हमले का षड्यन्त्र रचते थे,
पकड़ा पुलिस ने आ,
उस समय बोले ये–
'दुःख है केवल यह–
मैं हूँ निहत्था, हाय !
अन्यथा मरता मैं–
मार कर दसियों को,'
जग में कहानी छोड़,
जग में जवानी छोड़,
चढ़ गये फांसी पर।

शहीद 'भानसिंह'

सच्चे सिपाही थे,
'ग़दर दल' के थे वीर,
फूकने चिनगारी–
'कलकत्ते' आये जब–
कर लिया इनको क़ैद,
ब्रिटिश अदालत ने–
चण्ड से बाग़ी को काले पानी का दण्ड–
दे दिया करके न्याय।

जेल में पहुँचे जब–
जेलर ने आज्ञा दी–
चक्कियां पीसो अब।
इंकार करने पर,
बेड़ियां पहना दीं,
पीटा फिर बेतों से,
कर दिया क़ैदी को काल कोठरी में बन्द,

दो गज़ थी ऊँची वह,
दो गज़ ही लम्बी थी,
मस्त थे उसमें ये,
रात भर गाते थे,
जेलर ने आज्ञा दी–
'बन्द कर गाना यह',
गाया इन्हों ने और,
जेलर ने गुस्से से–
काल कोठरी में ही–
रस्सी से बँधवाकर–
बेंतों से पिटवाया।
फिर कहो पिँजरे में–
किस तरह रहते प्राण ?
उड़ गये पिँजरा छोड़।

शहीद 'अरुड़सिंह'

भावुक प्रकृति के थे,
लोहे से दृढ़तर थे,
विप्लवी खुफ़िया थे,
मित्रता पुलिस से कर भेद ले आते थे,
जेल में जा जा कर पिस्टल दे आते थे,
एक दिन जेलर के पास जब पहुँचे ये–
जेल के फाटक पर पूछा पुलिस ने यह–
'कौन हो बोलो तुम ?'
बोले 'अरुड़ हूँ मैं',
बोला फिर थानेदार–
'कौन से अरुड़ हो तुम ?'
बोले फिर सेनानी–
'ढूँढते जिसको तुम ।'

कर लिया इनको क़ैद,
पूछा पुलिस ने यह–
'क्या कभी थाने में आये हो पहिले भी ?'
बोले ये, 'दसियों बार ।'

अभियोग चलने पर–
मान लीं सब बातें,
चढ़ गये फांसी पर ।

शहीद 'सोहनलाल पाठक'

आये 'अमेरिका' से 'बर्मा' में 'पाठक' जी-
क्रान्ति करने के हेतु,
फौज को भड़काया,
एक दिन विप्लव की कर दी थी निश्चित तिथि,
खुल गया लेकिन भेद,
हो गई असफल क्रान्ति।

एक दिन उसके बाद-
तोपख़ाने में ये-
फूकने निकले आग,
आ गया 'लैफ्टीनैंट'-
कर लिया इनको क़ैद,
उस समय इनके पास-
तीन थीं पिस्तौलें,
और कुछ बम् भी थे।
कर दिया इनको बन्द,

लेकिन ये विद्रोही–
जेल के नियमों को तोड़ते रहते थे,
कहते थे 'गोरों के नियमों को क्यों मानूँ ?'

एक दिन 'मैजिस्ट्रेट'–
बोला यह 'पाठक' से–
'मांग लो माफ़ी तुम ।'
सुन कर ये मुस्काये–
और फिर यह बोले–
'माफ़ी तो कुछ दिन बाद अँग्रेज़ मांगेंगे ।'

चल दिये 'मैजिस्ट्रेट',
फांसी के तख़्ते पर चढ़ गये 'पाठक' जी,
खिँच गया तख़्ता वह,
रह गई कविता यह ।

शहीद 'ऊधमसिंह'

कालकोठरी में थे,
एक दिन 'वार्डर' ने खोला जब उसका द्वार–
ग़ायब थे 'ऊधमसिंह',
बन्द थे ताले सब,

फिर कैसे भागे
राम ही जाने यह,
घबराये सब के सब,
जा पहुँचे 'काबुल' ये,
एक दिन 'काबुल' से आये जब सरहद पर–
कर दिया इनको क़त्ल ।

शहीद 'नलिन वाक्च्य'

(वीर गति १५ जून १९१८)

भर कर रिवॉल्वर ये—
तकिये के नीचे रख—
सो रहे थे घर में,
विप्लवी साथी कुछ दे रहे थे पहरा,
घेरा पुलिस ने घर,
पहरे के सैनिक ने 'वाक्च्य' को जगाया जा,
बोला, 'पुलिस है 'वाक्च्य'!'
'वाक्च्य' ने आज्ञा दी—
'गोली चलाओ सब।'
बंगाली युवकों ने—
नीचे से ऊपर आ—
गोलियां बरसा दीं,
भागे सिपाही सब,
और फिर ये भी सब उड़ गये उस घर से,
जा छिपे जंगल में।
दो दिन के बाद ही—
'लाइन पुलिस' ने आ—

घेरीं गुफायें वे,
नौ सौ सिपाही थे।
छः प्राणी थे ये कुल
छिड़ गया फिर से युद्ध,
लेकिन हज़ारों में कब तलक लड़ते ये,
मर गये सैनिक पांच,
रह गये केवल दो–
छिप गये दरों में,
समझे सिपाही सब पांच ही थे ये कुल,
चल दिये लेकर लाश,
और उन दो में भी–
घायल था साथी एक,
मर गया तड़प कर वह,
रह गये अकेले 'वाक्च्य',
दश दिन के भूखे थे,
'हावड़ा' पहुँचे ये,
पास में पिस्टल था,

जंगल का कीड़ा एक गर्दन में चिपटा था–
लग गया उसका विष,
हो गये रोगी ये,
पेड़ के तने से लग पड़ गये पृथ्वी पर,

एक दिन उस पथ से सहपाठी जाता था–
'वाक्च्य' को देखा और बोला 'नलिन' हो क्या ?
एवं 'नलिन' को वह ले गया अपने घर,
मट्ठे की मालिश की,
मट्ठा पिलाया ख़ूब,
रोग से छूटे 'वाक्च्य'।
स्वस्थ हो निकले जब–
घेरा पुलिस ने आ–
उड़ गये फिर भी 'वाक्च्य'
जा छिपे घर में एक,
किन्तु दो घण्टे बाद–
घिर गये फिर पथ पर,
कुछ देर गोली का गोली से उत्तर दे–
गिर गया भारत वीर,
बोला तब थानेदार–
'क़ैद अब हो तुम 'वाक्च्य'!'
ग़द्दार थानेदार कह ही रहा था यह–
आ घुसी गोली एक,
दूसरी गोली एक दौड़ी इधर से भी–
घुस गई छाती में–
'वाक्च्य' के निकले प्राण।

शहीद 'खुशीराम'

(वीर गति १६१६)

लाहौर के जलसे में-
देते थे भाषण ये,
बाद उस जलसे के-
निकला जलूस एक,
नेतृत्व इनका था,
जिस समय पहुँचे ये-
सामने थाने के-
रोका पुलिस ने आ,
फौज भी आ पहुँची,
बोली 'जलूस को कर दो यहीं से बन्द',
बोले खुशी से 'राम'-
'निकलेगा, निकलेगा',
छोड़ी पुलिस ने तब-
गोलियां हवा में कुछ,
भागे डर डर कर लोग।

लेकिन अकेले 'राम'-
हाथ में झण्डा ले-
बढ़ चले आगे को,
एक दम सीने में आ लगी गोली एक,
छाती में गोली खा आगे बढ़ाया पैर,
दूसरी गोली और घुस गई सीने में,
फिर बढ़े फिर गोली,
फिर बढ़े फिर गोली,
फिर बढ़े फिर गोली,
गिर गये अब के वे,
गिरने के बाद भी—
हत्यारे गोरों ने—
दो गोली मारीं और।
अन्त तक झण्डे की 'राम' ने रक्षा की।

शहीद 'पं० गेंदालाल दीक्षित'

(वीर गति १६२०)

'बंग-भंग' का था काल,
आन्दोलन चलता था,
बंगाली युवकों ने छोड़ा अहिंसा-पथ,
कर लिये बम तैयार,
पिस्तौलें ले आये,
और उस दल के साथ मिल गये 'दीक्षित' जी,
लग गये लगन के साथ,
भारत के डाकू दल मिल गये इस दल में,
संयुक्त सूबे में बन गया इनका केन्द्र,
'यमुना' व 'चम्बल' के बीहड़ में रहते थे,
बहुत से शिक्षित भी हो गये इनके साथ,
बन 'मातृदेवी दल' लग गया विप्लव में,
एक था 'हिन्दूसिंह'—
आ मिला इस दल में,
खुफिया पुलिस का वह अधिकारी नौकर था।

फाँसी

जननी के भक्तों को धन की ज़रूरत थी,
चल दिये 'ग्वालियर' ये–
डालने डाका एक,
अस्सी विद्रोही वीर,
जाना जहां था वह दो दिन की मंज़िल थी,
अतएव जंगल में ठहरे कुछ सोने को,
सरकारी खुफिया भी साथ था इन सबके,
उसने ही इनको उस जंगल में ठहराया–
और खुद यह कह कर चल दिया बाग़ी वह–
गांव तक जाता हूँ पूरियां लेने कुछ,
थोड़ी ही देर बाद–
पूरियां लेकर वह आया उस दल के पास,
बोला यह, 'लाया हूँ पूरियां गर्मागर्म–
खाओ सब दो दो यार !'
भूखे थे सब सैनिक लग गये खाने वे,
खा गये 'दीक्षित' भी,
खाते ही ऐंठी जीभ–
चिल्ला कर बोले वे–
'मत खाना बिल्कुल और,
धोखा है, धोखा है,'
कहते ही कहते यह सरकारी नौकर पर–

गोली चला डाली,
पर गया ख़ाली वार,
पागल नशे में थे,
दूसरी गोली के चलने से पहिले ही–
पांच सौ गोरों ने घेरा उस दल को आ,
पांच सौ सवारों ने–
बन्दूकें दाग़ दीं,
गोलियां इधर से भी चल पड़ीं दन दन दन,
क्षण भर में रण-प्रांगण बन गया सूना बन,
बन्दूक 'दीक्षित' की–
गोलियां उगलती थी,
कितने ही गोरों को 'यमपुरी' पहुँचाया,
हो गये घायल ये,
मर गये सैनिक कुछ,
शेष घायलों को क़ैद–
कर लिया गोरों ने,
कर दिया 'दीक्षित' को 'ग्वालियर' क़िले में बन्द,
'मैनपुरी षड्यन्त्र'–
नाम से मुक़दमा था,
सड़ सड़ कर कारा में–
हो गये 'दीक्षित' जी रोगी तपेदिक के।

सोची उन्होंने चाल–
मिल गये पुलिस से वे–
बोले, 'बंगाल में संगठित दल है एक,
छोड़ दो मुझको, मैं सबको बता दूँगा,'
समझे अंग्रेज़ ये–
घबरा गये हैं ये,
हाल सब कह देंगे,
सरकारी साक्षी के साथ में रक्खे ये,
जेल से बाहर थी उन सबकी बैरिक एक,
एक दिन हलचल सी मच गई सारे में–
आई यह सूचना—
उड़ गये 'दीक्षित' जी
सर पटक हारे सब आये न 'दीक्षित' हाथ,

भागकर 'गेंदालाल'–
छिप गये जंगल में,
दिक़ के थे रोगी वे–
बहुत ही दुर्बल थे,
एक दिन अपने घर जा पहुँचे आधी रात–
देखकर इनका मुँह डर गये घरवाले,
बोले 'इस घर पर तो पहरा पुलिस का है,
निकलो यहां से तुम।'

किन्तु उस सैनिक को–
दश क़दम चलना भी–
मौत से लड़ना था,
बैठता उठता पर चल दिया घर से वह,
पानी पिलाने की नौकरी कर ली एक,
'दिल्ली' की प्याऊ पर,
रोग से पीड़ित वे पानी पिलाते थे,
एक या दो रोटी खा खा कर जीवित थे।
एक दिन कुवे पर उस–
जल पीने आ पहुँचा वर्षों से बिछड़ा मित्र,
पानी पिलाते थे जिस समय उसको ये–
उस समय आंखों से बरसात बहती थी,
मित्र ने पानी पी देखा जब उसकी ओर–
भूले से बोले, 'क्यों, क्या हुआ पंडित जी !'
हिचकियां भर कर वे बोले पथिक से उस–
'पहिचानो, पहिचानो, कौन हूँ भैया ! मैं ?'
ग़ौर से देखा उस राही ने उनकी ओर–
चीख़ कर बोला, 'क्या पंडित जी गेंदालाल !'
और फिर कौली भर मिल गये दोनों मित्र।
बोले फिर 'दीक्षित' जी–
'मेरे घर जा कर तुम यह कह दो पत्नी से–

मिल आओ उनसे तुम,
और यदि ले आओ साथ तो अच्छा है,'
मित्र वह पत्नी को साथ ले पहुँचा पास–
देखकर पत्नी को गिर पड़े 'दीक्षित' जी,
और वह दुखियारी–
स्वामी के चरणों में हिचकियां भरती थी,
मित्र उन दोनों का रोना वह सह न सका–
बाहर आ कुटिया से गिर गया खाकर ग़श,
'दीक्षित' जी लाये तब उसको उठाकर पास,
बोले 'न रोओ मित्र !
भारत के दुःखों को देखो, तुम देखो, मित्र !'
बोले फिर पत्नी से–
'रोओ मत देवी ! तुम,'
फूट कर बोली वह–
'कौन अब मेरा नाथ !'
मतवाले 'दीक्षित' ने कह दिया हँस कर यह–
'सहस्रों विधवायें रोती हैं घर घर में–
कौन है उनका प्रिये !
कौन है अनाथों का,
कौन है किसानों का,
उन सबका जो है वह प्रियतम तुम्हारा है,

भगवती हो तुम तो,
सौभाग्यशाली हो,
तेरा पति भारत के मस्तक का टीका है।'
कहते ही कहते वे हो गये मूर्च्छित फिर,
मित्र ने सोचा यह—
'झोपड़ी ही में यदि हो गई इनकी मृत्यु—
पुलिस यदि आ पहुँची—
क़ैद हो जायेंगे।'
अतएव पत्नी को पहुँचाया उसने घर,
लौटकर आया जब—
छप गया पत्रों में—
'दीक्षित' जी तिल तिल कर मिट गये भारत पर।

श्रद्धा से अमर-फूल स्वीकार करना देव !
थोथी सी पूजा है सत्कार करना देव !
कवि की कलम के चार आंसू हैं चरणों में।

शहीद 'सूफ़ी अम्बा प्रसाद'

'भारत मां दल' था एक-
उसके ये सैनिक थे,
पंजाब भर में घूम-
चिनगारी सुलगाई,
विप्लवी पर्चे छाप बांटते रहते थे।

विद्रोही 'सूफ़ी' का वारन्ट जारी था,
किन्तु ये जा पहुँचे 'नैपाल' पहिले ही,
ठहरे 'गवर्नर' के,
नैपाली शासन में खुल गया पर यह भेद,
भावुक 'गवर्नर' को-
कर दिया पद से च्युत,
कर लिया इनको क़ैद।

'सूफ़ी जी' कारा से छूटे कुछ दिन के बाद,
'विद्रोही ईसा' यह पुस्तक निकाली एक,
और फिर कुछ दिन बाद-

वेश भर साधू का–
साथ कुछ मित्रों के–
चल दिये जंगल में,
भक्त मित्रों में एक–
खुफ़िया पुलिस का था।

विद्रोही साधू दल बैठा जब पर्वत पर–
बोला यह बगुला भक्त–
'अब कहां चलना है ?'
'सूफ़ी जी' बोले यह–
'सर में तुम्हारे दुष्ट।'
गुप्तचर बोला फिर–
'नाराज़ क्यों हो देव !'
बोले फिर 'सूफ़ी जी'–
'छोड़ दे पीछा अब,
अन्यथा खायेंगे चील या कौए लाश।'
बोला फिर बगुला भक्त–
'दोष क्या मेरा देव !'
बोले फिर 'सूफ़ी जी'–
'छोड़ दे चालाकी।'
इस बार पैरों पर गिर पड़ा बगुला भक्त,
और फिर यह बोला–

'पेट के कारण यह करता हूँ सब कुछ मैं ।'
घूमते फिरते फिर 'ईरान' पहुँचे ये,
घिर गये दो साथी सेठ के घर में एक,
अफ़ग़ानी था वह सेठ,
जिस समय आई पुलिस—
अफ़ग़ानी साथी ने—
पहिनाये बुरक़े और भेजा ज़नाने में,
देखा पुलिस ने घर,
आया न कुछ भी हाथ,
बोली पुलिस फिर यह—
'बुरक़े हटाओ सब ।'
यह सुन कर अफ़ग़ानी गुस्से से बोला यह—
'ऐसा कहा यदि फिर—
ख़ून हो जायेंगे',
डर गई इससे पुलिस ।

एक दिन 'सूफ़ी जी'—
घूमते फिरते थे,
पीछे सिपाही था,
जिस समय थाने के सामने पहुँचे वे—
देखा पुलिस ने, और रोका सिपाही ने,
जेब से पिस्टल काढ़—

शहीद सूफी अम्बाप्रसाद

अड़ गये 'सूफ़ी जी',
दुर्भाग्य ! पिस्टल का हो गया घोड़ा जाम,
कर लिया इनको क़ैद ।

आज्ञा दी गोरों ने–
'तोप के मुँह से बांध इनको उड़ादो कल ।'
आई जब प्रातः फौज–
बन्द था केवल शव,
उड़ गये रजनी में तोड़ कर पिँजरा प्राण ।

चार शहीद

(वीरगति १ सितम्बर १९२३)

एक था 'अकाली दल'–
जिसके ये सैनिक थे,
चारों ही थे फरार,
निश्चय था चारों का हरगिज़ न होंगे क़ैद,
वीर थे चारों ही,
मित्र थे चारों ही,
पीछे पुलिस भी थी,
पीछे पुलिस के ये अक्षय शर जैसे थे,
अपराधी थानेदार,
अपराधी दारोग़ा,
कितने ही मारे थे,
मारते रहते थे।

एक दिन जब ये वीर–
'बोमेली' क़स्बे से जाते कहीं को थे–
घेरा पुलिस ने आ,

'सुपरिन्टेंडेंट स्मिथ'-
सात सौ सवारों के साथ में आ पहुँचे,
दूसरी तरफ़ से भी.
घेरा कुछ गोरों ने,
पास ही नाला था–
कूद कर चारों ये जा पहुँचे उसके पार.
पिस्तौलें सीधी कीं,
गोली का गोली से देते थे उत्तर ये ।

चार थे सैनिक ये,
वे थे हज़ारो ही,
लड़ते कहां तक ये,
फिर भी शहीदों ने–
चार के बदले में मारे पचासों ही,
और फिर छोड़ा तन,
अँग्रेज़ी सेना के–
हड्डियां आईं हाथ ।

क्रान्तिकारी

शहीद

सन् १९२७ से —

शहीद 'रामप्रसाद बिस्मिल'

(फाँसी १६ दिसम्बर १६२७)

वृक्ष के नीचे वीर बालक खड़ा था एक,
तन पर लँगोटी थी,
दीपित था ब्रह्म तेज,
शान्ति थी वाणी में,
क्रान्ति थी आंखों में,
अन्तर की भावुकता मुख पर प्रकाशित थी।

शौर्य सा, सूर्य सा खिल उठा यौवन जब—
देख कर हथकड़ियां जल उठा अंगारा,
साथी इकट्ठे कर, जननी से ले कर द्रव्य—
'ग्वालियर' जा पहुँचे पिस्तौल लेने को,
अनजान 'बिस्मिल' को लोभी कबाड़ी ने—
दो सौ में बेचा एक पिस्तौल टूटा सा,
थोड़े दिन बाद फिर शस्त्रों का अनुभव कर—
तिकड़म से ले आये अच्छे पिस्तौल कुछ।
एक था थानेदार,

वृद्ध था इस लिए बन्धन से छुट्टी थी,
अपना पिस्तौल बेच छुट्टी चाहता था,
पाप से, शापों से,
'बिस्मिल' निज साथी के साथ जा उसके घर-
बोला, 'पिस्तौल वह हमको देदीजिये।'
शंका की आंखों से देख कर दोनों को-
बोला वह थानेदार-
'रहते कहां हो तुम ?'
गम्भीर मुद्रा से-
निर्भीक 'बिस्मिल' ने-
उत्तर यह दे दिया-
'अलवर' के पास ही बस्ती में रहते हैं।'
उत्तर में थानेदार खांस कर यह बोला-
'गांव के थाने से लाओ लिखवा कर तुम।'
'ठीक है' कह कर वे चल दिये दोनों वीर,
तीसरे दिवस फिर लिख कर स्वयम् ही पत्र-
कर दिये थाने के जाली हस्ताक्षर,
कृत्रिम प्रमाण-पत्र ले कर वे जा पहुँचे,
देख कर थानेदार पहिले तो चुप रहा,
और फिर यह बोला-
'थाने से पहिले मैं करलूँ प्रमाणित पत्र,

पिस्तौल दूँगा तब,'
सँभल कर, झुँजला कर 'बिस्मिल' ने यह कहा--
'तंग कर डाला यार !
लाओ यह पत्र तुम वापिस हम जाते हैं,
प्रस्तुत है पत्र जब और क्या लोगे प्राण ?'
रोब में 'बिस्मिल' के आ गया थानेदार,
बोला, 'लो ले जाओ,
बेचना ही है जब पूछ कर क्या लूंगा ?'
'माउज़र पिस्टल' वह–
ले लिया 'बिस्मिल' ने,
दे दिया उसका मूल्य ।

रात की गाड़ी से आ गये अड्डे पर,
गुरिल्ला प्रणाली से स्वाधीन होने को–
विद्रोही सेना वह कर उठी सिंहनाद,
धनियों को लूट कर लाते थे द्रव्य वे,
हृदयों को खींच कर लाते थे सेनानी,
दुःखों को सहन कर सकल्प करते दृढ़,
प्रेम के सम्बल से श्रद्धा बढ़ाते थे ।
विद्रोही सेनानी युद्ध ध्वनि कर उठे,
संगठित हो कर शक्ति जय जय जय कह उठी,

किन्तु यह भारत है फूट ही जिसमें हार,
जिसमें कुछ बनने की अन्धी दृढ़ लालसा।

एक दिन संध्या में टीले पर बैठा था–
सच्चा तपस्वी वह,
उज्ज्वल भविष्यत् सा,
स्वाधीन दीपक सा,
दुखियों की आशा सा,
उसके अनुशासन में–
जिसने बनाया था 'बिस्मिल' को 'बिस्मिल' सत्य,
पास ही यमुना की निर्मल तरंगें थीं।

एक दम दन दन की कानों में पहुँची ध्वनि,
दृग खोल 'बिस्मिल' ने सामने देखा जो–
उनका ही मित्र एक खून का प्यासा बन–
कर्मवीर 'बिस्मिल' पर गोली चलाता था।
किन्तु कवि 'बिस्मिल' के रक्षक थे 'राम' जब–
इस तरह कैसे वह दुनिया से चल देता,
गोली बराबर से हार कर जाती थी।
तत्काल 'बिस्मिल' तब–
चमड़े का बटवा खोल–
'माउज़र पिस्टल' काढ़–

'ठहर जा' कह उठा,
किन्तु वह विद्रोही चरणों में गिर पड़ा।

ऊपर की घटना के थोड़े दिन बाद ही-
वीरवर 'बिस्मिल' ने षड्यन्त्र सोचा यह-
ख़ूनी सरकार को लूट कर लायें द्रव्य।

एक दिन गाड़ी में-
सरकार साहब का कोष कुछ जाता था,
षड्यन्त्रकारी वीर-
कुछ साथी साथ ले-
चढ़ गये गाड़ी में,
पहुँचे जब 'काकोरी'-
पास ही जंगल में-
निश्चित जगह पर ठीक-
ज़ंजीर खींची और रुक गई गाड़ी वह,
सैनिक सब डट गये पटरी के पास ही,
कर्कश कुचक्र से गाड़ी में छाया भय,
दन दन दन दन दन की आवाज़ चिंघाड़ी।
साथ ही गूंजा नाद सच्चे जवानों का-
'कोई भी गाड़ी से बाहर यदि देखेगा-
गोली तड़प कर प्राण एक दम डस लेगी,

हम तो सरकार का लूटने आये धन,
जनता के साथी हैं,'
'बिस्मिल' ने तोड़ा वह सन्दूक लोहे का,
गांठ में बांधा धन,
चल दिये जीत कर पाला कबड्डी का,
रेल के रक्षक सब डिब्बों में छिप गये,
सिहों से चल दिये लूट कर गाड़ी ये।
हाय! पर अपने ही भेदिये बन बैठे,
भेद यह पच न सका,
'काकोरी घटना' से पुलिस भी पीछे थी,
'बिस्मिल' के साथ साथ रहते थे गुप्तचर।
एक दिन प्रातः काल—
आनन्द कानन में-कोई मुस्कान सी—
साड़ी सुनहरी से सज कर चमकती थी,
दमक उस साड़ी की नभ में दमकती थी,
बदली की अलकों में सिन्दूर भरती थी,
'बिस्मिल' ने शैया से उठकर जो देखा नभ—
कह उठा 'लाली तो मुख पर शहीदों के—
यह तो क्षण भंगुर है।'
घूँघट में छिप गया सुन कर ये शब्द चांद,
क्रुद्ध हो निकला सूर्य।

'काली' के खप्पर में जैसे भरा हो रक्त–
ऐसे ही लाल था आग का गोला वह,
सूरज के चरण छू कह उठा सेनानी–
'भारत की रक्षा को अपना अंगार दो।'
इतने में पुलिस ने दर पर आवाज़ दी–
कितनी ही पुलिस थी,
बन्दूक धारी थी,
घर घेर रक्खा था,
'बिस्मिल' ने खोला द्वार,
सामने आ गया एक दम थानेदार,
पहिले तो देखा घर–
और फिर पिंजरे में कर दिया 'बिस्मिल' बन्द।

लोहे की बेड़ियां,
फांसी की कोठरी,
सर पर चिल्लाता था रात भर नम्बरदार,
ख़ुफ़िया पुलिस की रोज़ भरमार रहती थी,
कहती थी 'हाल सब सच सच बतादो यदि–
फांसी के दण्ड से मुक्ति मिल जायेगी।'
गाड़ी डकैती के जितने भी क़ैदी थे–
रक्खे तनहाई में,
एकाकी क़ैदी से, गुप्तचर गोप्य बात–

जानना चाहते थे,
लालच से धमकी से,
कमज़ोर मन के हाय ! भेद कह देते थे,
इस लिये हो गया दुर्बल मुक़दमा वह ।
जज की अदालत में-
वीरवर 'बिस्मिल' ने-
आप ही कर कर तर्क-
सामने ला रक्खीं न्याय की उक्तियां,
लेकिन अदालत ने फांसी की सज़ा दी ।
दर्शन के योग्य था दृश्य वह, तीर्थ वह,
झूमता चलता था बांका शहीद वह,
बेड़ियां बजती थीं,
अद्भुत तराना था,
'बिस्मिल' के कण्ठ से कविता बरसती थी,
"दरो दीवार पर हसरत से नज़र करते हैं ।
ख़ुश रहो अहले वतन, हम तो सफ़र करते हैं ॥"

फांसी की तिथि से पूर्व सोचा यह 'बिस्मिल' ने—
कारा से भाग कर सब को छुड़ालूं मैं,
साधन पर मिल न सके,
भारत के नेता सब यत्न कर थक गये-
'बिस्मिल' के प्राणों की रक्षा वे कर न सके,

शहीद रामप्रसाद बिस्मिल

हत्यारा दिन आया–
सच्चे शहीद के अन्तिम ये शब्द थे—
'हत्यारे राज्य के नाश की इच्छा है',
इतना कह मिल गये तत्त्व में पांचों तत्त्व,
भारत का मुकुट वह चढ़ गया फांसी पर।
आज भी 'बिस्मिल' की क्रान्ति वह जीवित है,
बलिदान 'बिस्मिल' का, अभिमान भारत का,
वीर ! तुम धन्य हो।

शहीद 'अशफ़ाक़ उल्ला खां हसरत'

(फाँसी दिसम्बर १६२७)

मन्दिर यह, मस्जिद वह,
शेख़ यह, काफ़िर वह,
बेकार बातों पर—
हिन्दू व मुसलमान लड़ते जहाँ पर रोज़,
फूटते रहते सर,
किन्तु यह भूले वे—
जग में ग़ुलामों का मज़हब क्या, धर्म क्या ?
सउओं पर गोरों की चलती कृपाणें रोज़.
धर्म पर उनकी नीति जीत बन पीती रक्त,
आपस की फूट से राज्य वे करते हैं,
उन पर जो शासक थे—
धर्म विज्ञान के,
शस्त्र विज्ञान के,
ऐसे इस देश में—
'अशफ़ाक़ उल्ला खां वारसी हसरत' का,
भारत के भाग्य से भारत में हुआ जन्म।
जिसकी उदारता कवि के हृदय सी थी,

शहीद अशफ़ाक़ उल्ला खां हसरत

जिसकी उपासना "लक्ष्मण" अनुज सी थी,
भारत में कितने ही षड्यन्त्र हो चुके,
कितने ही मतवाले चढ़ चुके फाँसी पर,
कितने ही बंगाली, कितने ही हिन्दू, सिक्ख,
लेकिन मुसलमान उनमें है एक ही-
"अशफ़ाक़ उल्ला खां"
जिसका ईमान था हथकड़ियां तोड़ना,
जिसका उद्देश्य था फाँसी को चूमना,
भारत के भव्य वीर "वारसी हसरत' ने-
भारत हित हेतु निज प्राणों की आहुति दी।
उनके हृदय में थे षड्यन्त्रकारी भाव,
देश हित मरने का अद्भुत अलौकिक चाव,
क्रान्तिकारियों में वीर मिलना चाहते थे,
'अशफ़ाक़ उल्ला' ने 'बिस्मिल'* से बातें कीं,
पहिले तो 'बिस्मिल' रोज़ उनको टला देते,
थोड़े दिन बाद जब विश्वास हो गया-
'बिस्मिल' 'अशफ़ाक़' वीर बन गये सच्चे मित्र।

एक दिन हसरत को ज्वर ने सताया जब-
सात नम्बर था ताप,

---

* रामप्रसाद बिस्मिल

सुध भूल बैठे थे,
कहते थे 'राम ! राम !'
घर वाले यह बोले–
'हो गया काफ़िर यह,
कहता है राम ! राम !'
'अशफ़ाक़ उल्ला' का मित्र एक यह बोला–
'बिस्मिल' की याद ही 'हसरत' की हसरत है,
'अशफ़ाक़ उल्ला खां' उसको बुलाते हैं,
'बिस्मिल' को लाये लोग–
'राम' से चिपट कर 'अशफ़ाक़ उल्ला' ने–
रो रो हृदय की आग आंखों से ठण्डी की,
दो चार दिन के बाद हो गया ज्वर भी शान्त।
ऐसे ही एक दिन–
मस्जिद में कुछ गुण्डे–
'बिस्मिल' के ख़ून की तैयारी करते थे,
'अशफ़ाक़ उल्ला' को सब भेद मिल गया,
भर कर पिस्तौल निज मस्जिद में जा पहुँचे,
बोले कड़क कर यह–
'कौन है 'बिस्मिल' का शत्रु इस मस्जिद में–
'बिस्मिल' से पहिले वह 'हसरत' के प्राण ले,
पीने को प्रस्तुत हो रक्त निज मित्र का,

जिसका है मन पवित्र,
लेकिन अंग्रेज़ों का कौन है तुममें शत्रु ?'
जितने भी गुण्डे थे—
'हसरत' के जलते दृग देखकर डर भागे ।

''काकोरी क्रान्ति'' में 'हसरत' भी शामिल थे,
निकले वारण्ट जब—
'अशफ़ाक़ उल्ला खां' छिप गये आंखों से,
वैसे वे लोगों के बीच में रहते थे,
हृदयों में रहते थे,
'अशफ़ाक़ उल्ला' से साथी कुछ यह बोले—
'रूस उड़ जाओ तुम,'
लेकिन 'अशफ़ाक़' वीर हँस कर यह कह देते—
'मौत के डर से डर छिप कर न रहता हूँ,
काम कुछ करना है इससे फ़रार हूँ।'

एक दिन दिल्ली में कर लिया उनको क़ैद,
कहते अंग्रेज़ यह—
उनको जब पकड़ा तब लेते थे 'पासपोर्ट',
सामने जज के जब आये अदालत में—
आते ही 'हसरत' ने पूछा यह पहिला प्रश्न—
''पहिले भी क्या कभी 'हसरत' को देखा है ?

मैं तो अदालत में रोज़ ही आता था,
देखता रहता था तुमको इस कुर्सी पर,
आपकी आंखों ने मुझको न देखा क्यों ?
सम्भव है लज्जा से नीचे झुक जाती हों।"
पूछा अदालत ने-
'बैठते कहां थे तुम ?'
बोले 'अशफ़ाक़' यह-
'बैठते जहां पर सब बैठता वहीं था मैं-
रजपूती बाने में।'
एक दिन 'हसरत' से आ मिले सुपरिन्टेंडेंट,
जो खां बहादुर थे,
बोले 'यह 'बिस्मिल' है हिन्दू, तुम मुसलमान,
काफ़िर के चक्कर में व्यर्थ क्यों फँस गये ?
वह तो चाहता है राज्य हिन्दुओं का हो।'
सुन कर 'अशफ़ाक़' की हो गईं आंखें लाल,
झल्ला कर यह कहा-
'तुमने ही भारत को क़ैद कर रक्खा है,
देश की 'हसरत' से मत कहो ऐसे शब्द,
'बिस्मिल' है मानव और दानव तुम जैसे हैं,
'पंडित जी' मन्दिर हैं, 'पंडित जी' मस्जिद हैं,
हैं हिन्दुस्तानी वे,

यदि हिन्दुओं का राज्य होता है होने दो,
गोरों से अच्छा राज्य काले हिन्दुओं का है।'
'बिस्मिल' का 'लेफ्टीनेंट' गुस्से से यह बोला–
'हट जाओ आगे से',
'खां साहब' अपना सा मुँह लेकर चल दिये।
अन्ततः अदालत ने–
'अशफ़ाक़ उल्ला' को–
फाँसी की सज़ा दी,
जेल में "हसरत" हंस हर्ष चित्त रहते थे,
फाँसी से पहिले मित्र मिलने को आये जब–
'अशफ़ाक़ उल्ला' ने साबुन से धोये वस्त्र–
तन पर उबटना मल,
स्नान कर, मल कर तेल,
बालों में कंघा कर–
मस्तानी चाल से–
'सम्राटी हाल' से–
मित्रों से घुल मिल कर घुट घुट कर बातें कीं।
एक यह बोला 'कल चल दोगे दुनिया से',
हँस कर वे यह बोले 'कल मेरी शादी है,
प्राणों की आहुति दे जीवित रहूँगा अब,
युग युग का दीपक बन–

वह कब मिटा है जो होता शहीद है।'
हत्यारा दिन आया–
फाँसी की बैरिक से–
फाँसी के तख़्ते पर–
कन्धे पर धर 'क़ुरान'–
लेते ख़ुदा का नाम–
'कलमे' का करते पाठ–
झूमते चल दिये 'अशफ़ाक़ उल्ला ख़ां'
पूजा सी देशभक्ति अभिनन्दन करती थी,
फाँसी के तख़्ते ने 'हसरत' के चूमे पांव,
फाँसी के तख़्ते को चूमा 'अशफ़ाक़' ने,
कण्ठ से जा लिपटी फाँसी की प्यारी डोर,
चिपट कर यह बोली–
'हिन्दू व मुसलमान एक हो जायें जब–
तब मैं जल सकती हूँ,
हत्या से मुझको भी मिल कर बचा लो तुम।'

शहीद 'रोशनसिंह'

(फाँसी १६२७)

'रोशन' की क्रान्ति से रोशन यह देश है,
रोष है नस नस में,
जोश है नस नस में,
जिसके जय-घोष से होश उड़ जाते थे-
कपटी कुचक्रों के,
पश्चिमी सत्ता के।

बस्ती 'नवादा' में इनका हुआ था जन्म,
मुख्यतः जिसमें वीर रहते हैं राजपूत,
जिनकी कृपाणों का मानते लोहा सब,
'रोशन' ने बचपन में सीखे बहुत से खेल,
बरछी चलाते थे,
गदका चलाते थे,
सच्चे निशाने के, कुश्ती के पक्के थे,
भाले के वारों में पूरे प्रवीण थे,
वज्र से दृढ़ थे और ताले से रक्षक थे,

गम्भीर सैनिक थे,
घूमकर ग्राम ग्राम सन्देश देते थे।
एक बार पिँजरे में बन्द थे 'रोशन' जब–
कारा के द्वार पर ममता मां पिता वृद्ध,
बेटे से मिलने को आये घिसटते से,
हाय ! पर मिल न सके,
भारत सरकार ने कर दिया मिलना बन्द,
तड़पते रह गये ,
लग गये खटिया से,
एक दिन खटिया भी रूठी उस बूढ़े से,
पृथ्वी की गोदी में वृद्ध वह सो गया,
मृत्यु के पंजों ने–
खाट से खींचकर–
पृथ्वी पर दे पटका,
ले लिया गोदी में दौड़कर जननी ने–
प्रेम की मूर्ति मां पृथ्वी सहिष्णु ने,
जिसको सताते हम–
रात दिन पैरों से,
धन्य धन्य पृथ्वी मां !

'रोशन' को लगी जब मृत्यु की सूचना–
आंखों ही आंखों में पी गया आंसू वह,

अन्तर ही अन्तर में तड़प कर रह गया,
पत्थर का हृदय कर दुःख की श्वासें लीं,
'हरि ओ३म् तत्सत्' कह लग गया कामों में।

पुलिस ने बरेली में गोली चलाई थी,
'रोशन' वहीं पर थे,
भीड़ वह रुक न सकी,
जनता थी जोश में,
और उस घटना में रोशन को सज़ा दी,
काट कर वह सज़ा—
छूटकर कारा से—
आये जब 'रोशन सिंह'—
'बिस्मिल'* से बातें कीं,
उनके प्रभाव से हो गये उनके भक्त—
षड्यन्त्र क्रान्ति में लग गये देशभक्त।

अनशन में वीरत्व अन्नपूर्णा सा था,
भूख हड़ताल में करते सब कार्य थे,
दिनचर्या जैसी की तैसी ही चलती थी,
सन्ध्या उपासना,
खेलना हँसना खूब,

---

* रामप्रसाद बिस्मिल

मस्ती से नाचना,
पहिले ही जैसे थे,
पन्द्रह दिन अनशन के बाद भी दुर्बलता-
उनसे थी कोसो दूर।

यद्यपि मुक़दमे में-
'रोशन' के प्रति कुछ मिलता न था प्रमाण,
फिर भी अदालत ने ख़ूनी सज़ायें दीं,
'एक सौ इक्किस' और 'एक सौ बीस' में-
कारा की सख़्त क़ैद,
हत्यारी धारा के अन्तर्गत वीर को-
विद्रोही 'रोशन' को-
फांसी की सज़ा दी।

मौत की सज़ा सुन-
साहसी सैनिक का-
शौर्य से सूरज सा मुख मण्डल खिल उठा,
तम के कुहासों में-
एक ही दीपक वह-
जल गया भारत में बनकर दिवाली दीप,
फांसी से पूर्व के रोशन ये शब्द हैं-
'पैदा जो होता है मरता वह एक दिन,

मौत से डरना क्या ?
मेरी तपस्या यह असफल न जायेगी,
धर्म-युद्ध हेतु हित मेरा बलिदान यह,
देश के पौधे को सींचेगा मेरा रक्त।'

फांसी के रोज़ वे–
हाथ में गीता ले,
मस्ती में मुस्काते,
चढ़ गये तख़्ते पर,
कण्ठ से निकला नाद–
'जय बन्दे मातरम्',
'ओ३म् ओ३म् शान्ति शान्ति',
दूसरी ध्वनि निकली।
क्षण भर में जा पहुँचे प्राण दिवि मन्दिर में,
मुक्ति ने चूमे पांव।

शहीद 'राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी'

(फाँसी दिसम्बर १६२७)

भूखे 'बंगाल' में–
मुट्ठी भर दानों को प्राणी तरसते थे,
जननी के आगे पुत्र, पत्नी के आगे पति–
प्राण तज देते थे,
टुकड़ों पर भारत की बेटियां बिकती थीं,
ज़िन्दों को अन्न का दाना न मिलता था,
भूखों को मरने पर कफ़न तक न मिलता था,
ऐसे बंगाल में गर्जे 'लाहिड़ी' सिंह,
बचपन में जिसका तेज सूर्य सा दीपित था,
यौवन में जिसकी ज्योति ऊँची पताका थी,
सिंहों से 'सांगा' से जिसके संकल्प थे,
भावुक चितेरे थे,
ग्रन्थों के पण्डित थे,
निर्भीक सैनिक थे,
मण्डन से दूर थे,

अवसर पर आगे बढ़ झण्डा उठाते थे,
राष्ट्र के गौरव में श्रद्धा से तत्पर थे,
सामाजिक क्रान्ति में अग्नि से दहकते थे,
भूखे मज़दूरों को संगठित करते थे,
हँसमुँख स्वभाव था।

वीर की मस्ती देख एक दिन 'बैरिस्टर'
बोले 'लाहिड़ी' से–
'तुमको पता है तुम मौत के मुँह में हो',
डरपोक बातें सुन 'राजेन्द्र' हँस दिये,
किन्तु निज कामों में रहते थे सावधान,
इनका विश्वास था–
जब तक समाज में रूढ़ी का राज्य है,
प्रचलित दोष हैं–
तब तक इस देश का भाग्य बादलों में है,
सामाजिक क्रान्ति का आदेश देते थे,
रचनात्मक कार्यों को कहते थे जग की जीत,
करते थे अधिक और कहते थे बहुत कम,
मौत से न डरते थे, डरती थी उनसे मौत।
'काकोरी' घटना की–
क्रान्ति के बाद वे–
'काशी' में एम० ए० की कक्षा में पढ़ते थे,

किन्तु इससे भी पूर्व 'वारन्ट' जारी थे–
'दक्षिण बम केस' में–
सज़ा दस वर्ष की हो चुकी इनको थी,
'अण्डमन' जाने का दण्ड यह मिला ही था–
'काकोरी केस' में बँध गये 'लाहिड़ी' वीर,
क्रान्ति के मुक़दमे में–
एक दिन पुलिस से 'लाहिड़ी' लड़ पड़े,
थानेदार हथकड़ियां डालना चाहता था,
ये नहीं चाहते थे हथकड़ियां पहिनना।

क़ैदी 'लाहिड़ी' पर–
तीन धारायें थीं,
'एक सौ इक्किस' में आजन्म कारावास,
'एक सौ चौबिस' में,
काले पानी का दण्ड–
दे दिया अदालत ने,
'तीन सौ छयाणमें' में–
फांसी की सज़ा दी.
आज्ञा यह घोषित कर–
भेजे वे 'गोंडा' जेल,
बन्दी थे लेकिन वीर–
गाते थे सोते थे,

हँसते हँसाते थे,
'ग्यारह अक्टूबर' को-
फांसी का दिवस था,
'राजेन्द्रनाथ' ने-
पूर्व इस तिथि से-
'मित्रों' को लिखे पत्र,
'पतवार जाती पार,
अन्तिम यह नमस्कार,
युग युग तक जीने को मरता मैं एक बार',
पर पत्र लिखने के बाद वह फांसी की-
तारीख़ टल गई,
'प्रीवी कौंसिल' में इस दण्ड की की अपील,
इस लिये फांसी की तिथि वह बदल दी थी,
लेकिन जब न्याय की मांग यह ठुकरादी-
फांसी की सज़ा ही निश्चित तब रह गई।

'सतरह दिसम्बर सन् १९२७'-
खूनी दिन बन आया,
सूर्य की आंखों से लाल था अम्बर जब-
ब्रह्माण्ड क्रुद्ध था-
फांसी के तख्ते पर चढ़ गये 'लाहिड़ी' वीर,
मरने के बाद भी मुँख पर न सलवट थी,

फाँसी

हँसते थे अधर दो,
भीड़ की भीड़ ने शव पर चढ़ाये फूल,
कन्धों पर झूले वीर फांसी पर झूल झूल,
आँखों में झूले वे,
अमर सेनानी वह,
सच्चा शहीद वह,
सिंहासन मुकुट वह,
गोरों के मस्तक पर देखलो कालिमा,
जग में 'लाहिड़ी' की दीपित है लालिमा,
मोक्ष मृत्युञ्जय वह।

शहीद 'सरदार भगतसिंह'

(फांसी २३ मार्च सन् १६३०)

'सांडर्स' हत्यारा-
फिटफिटिया गाड़ी पर-
बैठकर जैसे ही उड़ना चाहता था,
वैसे ही सन सन सन सन सन सन करती एक-
गोली कहीं से आ घुस गई सीने में,
एक दम पृथ्वी पर गिर पड़ा हत्यारा,
सहसा दो गोली और घुस गईं छाती में-
पी गईं उसके प्राण।

दस गज़ की दूरी पर-
सैनिक खड़े थे दो,
गोली चलाते थे,
नौकर 'सांडर्स' का भागा पकड़ने को,
पर एक गोली ने-
विद्रोही नौकर को-
यमलोक पहुँचाया,

और ये दोनों वीर–
ख़ून का बदला ले–
घुस गये कालिज में,
अभिनन्दन करने को 'शेखर' उपस्थित थे,
दोनों के चूमे हाथ–
कार में बैठाकर–
ले गये कालिज से,
एक थे 'भगतसिंह', दूसरे 'राजगुरु',
सिंह के दांतों सी 'सिंह' की पिस्टल ने-
ले लिया बदला वीर 'लाजपत राय' का,
'पंजाब केसरी' के रक्त ने शोणित पी–
तख्त के पाये की खींच ली कीली एक,
खूनी की अर्थी को रखदी सुरक्षित वह ।

षड्यन्त्रकारी वीर–
'भगतसिंह', 'बी. के. दत्त'–
एक दिन जा पहुँचे, 'एसम्बली हाल' में
मेज़ के पास ही तान कर फेंका बम,
खलबली मच गई,
कुर्सियां टूटीं कुछ,
उपस्थिति घबराई,
लेकिन किसी के भी चोट कुछ भी न लगी,

सामने खड़े थे वीर,
हाथ में पिस्टल थे,
केवल दिखाने को पिस्तौल चलते थे,
स्वाधीनता के दिव्य सैनिक तपस्वी वे—
खूनी सरकार को करते थे सावधान,
रक्त से रँगने हाथ,
हत्यारे कहलाने,
दोनों न आये थे,
करना चाहते थे सब को सतर्क वे।

निश्चित यही था कि—
'शेखर' उन्हों के पास समय पर पहुँचेंगे,
लेकिन दुर्भाग्यवश वीरवर जा न सके,
फँस गये जाने किस हत्यारे जाल में,
समय पर रक्षा को हाय! वे जा न सके,
इतने में पुलिस ने कर लिया इनको क़ैद।
प्रातः सब पत्रों में इनके ही चित्र थे,
षड्यन्त्रकारी सब—
कैसे भी कारा से इनको छुड़ाने को—
कटिबद्ध हो होकर लग गये कामों में,
दवा बेहोशी की—
मौत के गोले कुछ—

ज़हरीली गैस कुछ–
प्रस्तुत कर षड्यन्त्र रचने को प्रस्तुत थे,
भेद खुल जाने से क़ैद सब हो गये,
गुप्त यन्त्रालय सब–
ख़ूनी सरकार के हाथों में पड़ गये ।

चल पड़ा मुक़दमा वह,
'आसफ़अली' ने की उसमें वकालत खूब.
मृत्यु के पंजे से 'भगतसिंह' छुट न सके,
तर्क की उक्तियां–
न्याय की सच्ची मांग–
भारत की 'कोशिशें–
रहम के विनय-पत्र –
ख़ूनी अदालत में–
ठुकराये गये सब,
फांसी के दण्ड की तारीख़ निश्चित की ।

आशा थी प्रातःकाल फांसी लगेगी किन्तु–
पहिले दिन रात्रि में फांसी पर लटकाया.
'सुखदेव' देव का पी गये पापी रक्त.
निर्दोषी 'राजगुरु' लटकाया फांसी पर.
वीरवर 'भगतसिंह' चढ़ गये फांसी पर.

डस गये हत्यारे ।

जब गई आधी रात–
सतलुज-किनारे पर–
तीनों शहीदों की जलती चितायें थीं,
मिट्टी के तेल से लाशें वे फूक दीं,
लेकिन वह 'सतलज-तट' मन्दिर शहीदों का,
उनकी ही भस्मी में स्वाधीन भारत है–
देखें हम कौन वह ढूँढ कर लाता है,
उनकी समाधि पर–
दीपक जलाने को–
सर रख हथेली पर–
सैनिकों ! बढ़ चलो,
देश के दीपक पर जल गये परवाने,
देखें तिरंगा कौन सैनिक लगाता है ।
कौन हथकड़ियां तोड़–
स्वाधीन करने का–
बीड़ा उठाता है ।

शहीद 'यतीन्द्रनाथ दास'

(भूख हड़ताल से १३ दिसम्बर १६३०)

लाहौर षड्यन्त्र के-
जितने भी बन्दी थे-
पिँजरे में उनके साथ व्यवहार ख़ूनी था।
अन्धे अधिकार ने-
रोटियां ऐसी दीं-
पशु भी जो खा न सकें,
कांटों की भूजी थी,
हड्डियां मिलती थीं,
एक दिन दाल में-
छिपकली पड़ी थी एक,
कम्बल फटे थे और-
पट्टे पुराने थे।

सैनिक 'यतीन्द्र' का-
आत्माभिमान जाग-
गर्ज कर कह उठा छोड़ दो खाना सब,

तत्काल सब ने ही कर दिया अनशन शुरु,
काराधिकारियों ने-
नली के द्वारा दूध पेटों में पहुँचाया,
इससे 'यतीन्द्र' वीर बेहोश हो गये,
कोई भी टस से मस होता न बिल्कुल था,
शक्ति सी भूख हड़ताल तेजस्वी भक्ति बन-
पूजा से भगवान् बनने को प्रस्तुत थी।

हार सरकार ने समिति बनाई एक,
कारा की जांच कर-
दूषित व्यवहारों की-
सूचना देने को,
समिति ने यह कहा-
'जब तक हम जांच कर सूचना तुमको दें-
तब तक तुम अनशन छुड़वाओ यह कह कर-
मांगें करेंगे पूर्ण,
होंगे सुधार सब,
अनशन न छूटा यदि-
मौत के मुँह में हैं-
वीर बन्दियों के प्राण।'
जेलर ने जा कहा-
राष्ट्र के शहीदों से-

'छोड़ दो अनशन तुम,
विश्वास रक्खो अब–
होंगे सुधार सब',
कुछ ने तो छोड़ दी,
शक्ति सी भूख हड़ताल,
लेकिन 'यतीन्द्र' वीर–
अड़ गये पर्वत से,
माँ के पुजारी ने अनशन न छोड़ा और–
लग गये ढूले से,
देश ने पुकारा यह–
छोड़ो 'यतीन्द्र' को,
बोली सरकार यह–
'छोड़ हम सकते हैं लेकिन मुचलकों पर',
राष्ट्र के पुजारी ने कर दिया अस्वीकार,
'आत्मा स्वतन्त्र जब–
बन्धन सहें फिर क्यों ?
बन्धन में रहेंगे जब–
क़ैद से मुक्ति क्या ?
जब तक सुधार पूर्ण–
होगा न कारा में,
अनशन न छोड़ूँगा।

शहीद यतीन्द्रनाथ दास

सच्चा शहीद वह हो गया मरणासन्न,
खूनी सरकार के रेंगी न जूं तक भी,
एक दिन प्रातःकाल सूर्यास्त हो गया,
तोड़ कर हथकड़ियां चल दिये 'यतीन्द्र' वीर,
लोहे की बेड़ियां बांध कर रख न सकीं,
कारा की दीवारें फोड़कर चल दिये,
छोड़कर चल दिये स्वार्थ की दुनिया यह,
परतन्त्र दुनिया यह,
चल दिया भारत भक्त,
इकसठ दिन अनशन कर।
राष्ट्र में मच गई हलचल बलिदान से-
जननी का उठ गया मस्तक अभिमान से,
वैसे तो प्रति दिन मरते हैं कितने ही,
लेकिन शहीद का मर कर ही होता जन्म,
मृत्युञ्जय सैनिक को कौन मार सकता है ?

तिरंगी ध्वजा में शव लिपटा शहीद का,
अर्थी पर चढ़े फूल,
बलिदान सौरभ से भारत सुगन्धित था,
साथ साथ चलते थे तारों से देशभक्त,
प्रत्येक इच्छुक था कन्धा लगाने को,
कुछ ने तो दे दिया घुस घुस कर कन्धा किन्तु-

रह गये कितने ही,
कौनियां छिल गईं कन्धा वे दे न सके,
गंगा-किनारे पर चन्दन की चिता चिन-
कर दिया दाह कर्म,
भस्मी सब लुट गई,
लूट सी मच गई,
एक एक चुटकी राख कुछ को तो मिल गई,
ले गये चांदी की डिबिया में रख रख वे,
शेष सब तरसते थे चुटकी भर राख को,
जननी तरसती है ऐसे सुपुत्र को,
भारत तरसता है भव्य मुख मण्डल को,
अभिमान-रक्षक को।

शहीद 'चन्द्रशेखर आज़ाद'

(वीरगति २७ फरवरी १९३१)

'कर्ण' के कवच सा था,
ढाल सी छाती थी,
नेज वह, तीर्थ वह,
क्रान्ति वह, शान्ति वह.
दहकता गोला वह,
भारत की चाह वह,
न्याय की राह वह,
दुखिया का, बुढ़िया का, जननी का मुकुट वह,
चलती निहत्थों पर जिसकी तलवार उस-
ख़ूनी जल्लाद का जिसने पिया हो रक्त-
ऐसा अंगार वह,
मुक्ति सी अजय शक्ति-
उसकी थी देश-भक्ति,
ब्रह्मास्त्र जैसा पास 'मॉउज़र पिस्टल' था,

न्याय का डंका ही जिसका जयघोष था,
वीर का अन्तस्तल–
उज्ज्वल रणस्थल था,
जिसमें षड्यन्त्रों के होते थे आविष्कार,
कैसे अनेक से एक लड़ सकता है–
गुरिल्ला प्रणाली से तरीक़े निकलते थे,
विप्लव सफलता के होते थे शंखनाद।

एक दिन पुलिस ने उसके लगाईं बेंत–
छिल गई कमर और रक्त बह निकला था,
उस दिन प्रतिज्ञा कर 'शेखर' ने यह कहा–
'चूस लो जितना ख़ून चूस अब सकते हो–
लेकिन तुम्हारे से बदला चुका लूँगा–
एक एक कोड़े का,
आज के बाद से–
षड्यन्त्रकारी मैं,
क्रान्ति मैं, आग मैं,
जीवित रहूँगा अब–
आज़ाद रह कर ही,
बन्दी न कर सकती ख़ूनी सरकार यह।'
'शेखर' के साहस से–
भीषण क्रोधाग्नि से–

एकत्रित हो गई क्रान्तिकारियों की शक्ति,
भयभीत हो गई शासन-प्रणाली यह.
थोड़े से वीरों से-
हत्यारी राज्यशक्ति-
थर थर थर थर्राई,
ख़ूनी के ख़ून के प्यासे पिस्तौल से-
सरकार डरती थी।

भयभीत सत्ता ने-
घोषणा करदी यह-
'आज़ाद' सैनिक को-
जो भी करेगा क़ैद,
कितने ही पुरस्कार, अधिकार पायेगा।
गुप्तचर थक गये,
थक गई राज्यशक्ति-
लेकिन 'आज़ाद' को क़ैद कर ला न सके।

तीर्थ त्रिवेणी के तट पर 'प्रयाग' में-
आनन्द मन्दिर के आदर्श कमरे में-
आराम करते थे 'पण्डित जवाहर लाल',
सहसा किसी ने द्वार खोले उस कमरे के,
देखा 'जवाहर' ने-

सामने वक्षस्थल ताने खड़ा था वीर,
नंगा शरीर था–
बांधे था तहमद वह,
जिसके हर तार में श्रीराम अंकित थे।

चन्दन से शब्दों में बोले 'आज़ाद' यह–
'आज तक प्रतिशोध लेता रहा हूँ मैं–
अपनों के रक्त का, भारत के रक्त का,
चाटा पिस्तौल ने ख़ून ख़ूनियों का है,
आज मैं एकाकी–
घेरे हुए हैं किन्तु कितने ही हत्यारे,
बोलो, मैं क्या करूं ?'

'पण्डित जवाहरलाल' मूक से रह गये,
उत्तर कुछ दे न सके,
'आज़ाद' चल दिये।

श्यामल, सफ़ेद, नील नदियों के तट के पास–
'अल्फ़्रेड पार्क' में–
प्रातः दस बजे के बाद–
साथ साथ जाते थे,
'आज़ाद' सेनानी, 'सुखदेव' सेनानी,
सहसा 'सुखदेव' से 'आज़ाद' यह बोले–

'पीछे पुलिस है तुम एक दम छिप जाओ',
पास ही साईकिल रक्खी किसी की थी–
'सुखदेव' उस पर चढ़–
'नौ दो ग्यारह हो गये' एक क्षण में ही।
इतने में पुलिस ने आ–
घेरा 'आज़ाद' को,
'शेखर' अकेले थे, कितनी ही पुलिस थी,
बोला यह दारोग़ा–
'आज़ाद ! क़ैद हो',
'आज़ाद' हँसते से सिंह से यह बोले–
'मैं तो आज़ाद हूँ,
कौन आज़ाद को क़ैद कर सकता है ?
जीते जी कवि को कौन क़ैद कर सकता है ?'

'शेखर' के हाथ में 'माउज़र पिस्टल' था–
एकाकी वीर से डरती थी पुलिस सब,
पास तक जा न सकी,
केवल था वृक्ष एक साथी 'आज़ाद' का–
रक्षा को पुलिस की कितने ही पेड़ थे,
तन गईं पिस्तौलें, तन गईं बन्दूकें,
उठ गया 'शेखर' का पिस्तौल वाला हाथ,
दन दन दन दन दन दन–

एक पर कितनी ही गोलियां चल पड़ीं,
'शेखर' की पिस्टल से बिँध गये पेड़ सब,
बच गये हत्यारे आड़ में छिप छिप कर,
पुलिस के कितने ही चूके निशाने पर–
'शेखर' की अन्टी से गोलियां गिर पड़ीं,
जैसे ही झुका वह चुगने को कारतूस–
वैसे ही पुलिस ने गोलियां दागीं और,
जननी के ताज की–
बहिनों की लाज की–
स्वर्णिम प्रभात की–
जांघ में घुस गई हत्यारी गोली एक।

उसकी प्रतिज्ञा थी–
स्वाधीन जीने की,
स्वाधीन मरने की,
लाश ही अर्थी पर उसकी बँध सकती थी,
इस लिये 'शेखर' ने अपने पिस्तौल से–
अपनी ही छाती में मारली गोली एक,
'आज़ाद' चल दिये दूसरी दुनिया में.
किन्तु वे हत्यारे–
'शेखर' के शव पर भी गोली चलाते थे,
और वह स्वर्ग में हँसता था देखकर,

शहीद चन्द्रशेखर आज़ाद

डरती थी पुलिस सब–
शव तक पहुँचने का साहस न होता था,
कितनी ही देर बाद–
डरता सा दारोगा पिस्टल ले बढ़ चला,
साथ साथ पीछे ही पुलिस सब चल पड़ी,
पहिले 'आज़ाद' का पिस्टल कर हस्तगत,
क़फ़नी से ढक दी लाश,
'कर्ण' के छल बल कर जैसे लिये थे प्राण–
ऐसे ही पुलिस ने 'शेखर' की हत्या की।

'अल्फ्रेड पार्क' का स्मृति-चिह्न वृक्ष वह–
गोरों ने कटवाया,
लेकिन 'आज़ाद' की याद है हृदयों में,
अब भी उस वीर का आतङ्क बाक़ी है,
क्रान्ति-दूत जीवित है,
रक्त से सींचा है उसने जिस पौधे को–
फल कर रहेगा वह,
बुझ गया दीपक जो–
जल कर रहेगा वह,
खिलकर रहेगा फूल,
श्रमिकों के श्रम-कण से,
आंखों के जल-कण से।

शहीद 'ऊधम सिंह'

(फाँसी १६३८)

कण कण में चलती हैं गोलियां गोरों की,
कण कण में आंखों से आंसू बरसते हैं,
कण कण में हत्यारे फूट के बोते बीज,
दुर्भिक्ष कण कण में,
कण कण में क़त्लेआम,
अंग्रेज़ी राज्य में ख़ून ही ख़ून है,
और ये हत्या-काण्ड-
बन बन बग़ावत के तूफ़ान उठते हैं,
रोज़ ही होती हैं क्रान्तियां ग़दर के बाद।

'माइकेल ओडायर' ने-
'जलियानवाला' बाग़-
मरघट बनाया था,
भूखे निहत्थों का जिसमें बहाया रक्त,
जिस हत्याकाण्ड में बूढ़ों के काटे सिर,
शिशुओं पर गोलियां,

बहिनों पर गोलियां-
तोपें उगलती थीं।

कोई यदि बैठी थी पति की प्रतीक्षा में-
सामने पहुँचा शव,
कोई यदि बैठी थी बाट में बेटे की-
आ कहा किसी ने यह-
खाट पर पड़कर वह जा पहुँचा अस्पताल,
कोई यदि भैया की बाट में बैठी थी-
सूचना पहुँची यह-
चीरघर में है लाश,
उस हत्याकाण्ड में-
कितनी ही विधवायें हो गईं घर घर में,
ख़ूनी सरकार का 'कर्फ्यू आर्डर' था-
अज्ञात कितने ही खा गया 'कर्फ्यू' वह।

मां 'ऊधमसिंह' की-
पति की प्रतीक्षा में पगली सी बैठी थी,
सूचना आई यह-
'लाश ले जाओ आ।'
सुनकर यह पृथ्वी पर गिर पड़ी दुखिया मां,
तब 'ऊधमसिंह' की आंखों में खौला ख़ून,

फाँसी

उसने प्रतिज्ञा की–
'ख़ूनी के लूंगा प्राण',
मन में ही रक्खी पर अपनी प्रतिज्ञा दृढ़ ।

एक दिन दुनिया के पत्रों में शीर्षक था–
'ख़ून ओडायर का',
विस्फोट 'लण्डन' में,
घायल हैं 'ज़ैटलैण्ड',
भारतीय 'ऊधमसिंह' मौक़े पर हुए क़ैद,
ख़ून के बदले ख़ून,
'पार्लियामेन्ट' में घुस दुश्मन के लिये प्राण

प्रतिशोध लेने को 'लण्डन' में सतरह वर्ष–
ठहरे थे 'ऊधमसिंह',
ख़ून का बदला ले चढ़ गये फांसी पर ।
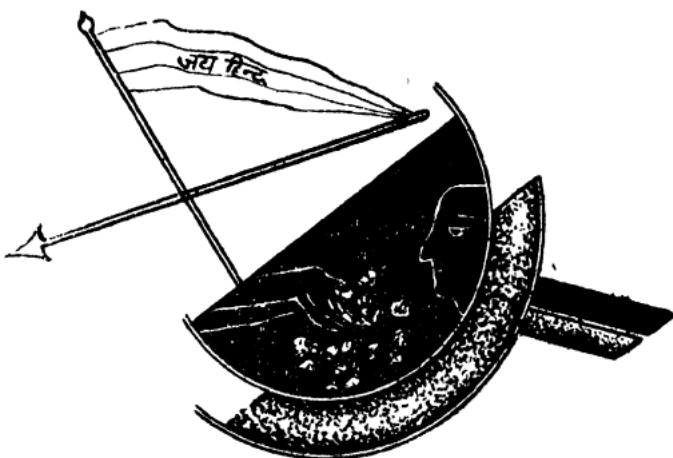
सन् १९४२ से —

शहीद 'रामस्वरूप शर्मा'

(वीरगति अगस्त १९४२)

'गोलियां चल गईं, गोलियां चल गईं, गोलियां चल गईं।'
'आग आग, आग आग',
'वह थाना फुक गया',
'फुक गया स्टेशन वह',
'पटरियां तोड़ दीं',
'तार काट डाले हैं',
नौ अगस्त को ये सब पत्रों के शीर्षक थे।

भावुक 'भमौरी' में होता था जलसा एक-
'शर्मा जी' देते थे भाषण उस जलसे में,
सहसा पुलिस की दो लारियां आ पहुँची,
जनता उत्तेजित थी,
जय जय जय, क्रान्ति क्रान्ति-
गूँजे स्वर खेतों में,
ख़ूनी पुलिस ने भुन गोलियां चला डालीं।
फौजी सरदार ने-
'शर्मा' के वक्ष में-
ख़ूनी पिस्तौल से-
गोलियां दागीं सात,
बूढ़े निहत्थों पर चलती थीं गोलियां,

बच्चों पर, बहिनों पर चलती थीं गोलियां,
रक्त से रँग गई पृथ्वी 'भमौरी' की,
'शर्मा जी' मंच पर लेते थे अन्तिम श्वास,
उनको पुलिस ने खींच लारी में ला डाला।
छाती से ख़ून की धारायें बहती थीं,
लेकिन शहीद के मुख पर मुस्कान थी,
रटते थे 'राम राम' ।
थोड़ी ही दूर पर पहुँची जब लारी वह–
दूसरी दुनिया में जा पहुँचे 'शर्मा जी',
लारी पुलिस ने रोक,
गाड़ी वहीं पर लाश ।

'गांधी आश्रम' के लोग–
पहुँचे पुलिस के पास,
लेने शव 'शर्मा' का,
पर इस सरकार ने कर लिया उन्हें भी क़ैद ।
अब यहां फिर वहां–
इस तरह गाड़ी लाश,
नाश की बार बार गाड़ गाड़ उनकी लाश,
लाश पर पुलिस का नाश करके ही लेगी दम,
ख़ून के बदले में ख़ून ही लेंगे हम,
भारत हमारा है, शासन करेंगे हम ।'

शहीद 'हेमू'

(फाँसी १६४२)

जिस तरह घुँघराली अलकों में हँसता चांद,
जिस तरह अम्बर में अरुणाई मुस्काती,
जिस तरह नदियों में लहरें थिरकती हैं,
जिस तरह शैशव में रँगरलियां रचतीं फाग-
ऐसे ही 'हेमू' का यौवन मचलता था।

जिस तरह जलता है बारह बजे का सूर्य,
जैसे रणप्रांगण में तलवार चलती है,
जैसे ग़दर की आग कण कण में जलती है,
जैसे जलप्लावन में भूचाल आते हैं,
ऐसे ही जलता था विद्रोही बालक वह,
विप्लवी नर्त्तन था,
तूफ़ानी ताण्डव था,
युद्ध में जा कूदा छोड़कर कालिज वह।

जैसे 'अभिमन्यु' ने 'चक्रव्यूह' भेदा था,
ऐसे ही बालक वह घुस गया गोरों में,

जैसे पवनसुत ने लंका जलाई थी–
ऐसे ही 'हेमू' ने फूक दी चिनगारी,
और उस ज्वाला ने थानों में देदी आग ।

एक दिन बालक वह–
गाड़ी उलटने को पटरियां उलटता था–
आ पहुँचे हत्यारे–
कर लिया उसको क़ैद,
लटकाया फांसी पर।
धो गया शोणित से अपनी ग़ुलामी वह,
लेकिन हम जीवित हैं लज्जा से मर न गये,
हम हैं करोड़ो हाय फिर भी ग़ुलामी में ;
उठकर लगा दो आग,
बेड़ियां रोती हैं,
तोड़ दो हथकड़ियां,
कहदो ग़ुलामी से–
'छोड़ दे भारत अब,
अन्यथा कर देगा विद्रोह भारत यह,
तुझको जला देगा,
रक्त से जननी का अभिषेक कर देगा।'

शहीद 'लाल पद्मधरसिंह'

(वीरगति अगस्त १६४२)

नेता सब किये क़ैद–
कण कण में क्रान्ति की चिनगारी जल उठी,
सब तरफ़ दहकी आग
तट पर 'त्रिवेणी' के–
पावन 'प्रयाग' में–
छात्र-छात्राओं का निकला जलूस एक,
ख़ूनी पुलिस ने आ रोका निहत्थों को।
बहिनों के सीनों पर–
तन गईं संगीनें,
तन गईं बन्दूकें,
तन गईं पिस्तौलें।

'इन्क़लाब ज़िन्दाबाद',
'भारत माता की जय',
'अंग्रेज़ों! भारत छोड़ो',

गूंजे रणघोष ये,
देवियां बढ़ चलीं-
आगे संगीनों के,
आगे बन्दूकों के,
गोलियां चल पड़ीं,
दौड़ कर 'पद्मधर' बढ़ चला छाती खोल,
बोला पुलिस से यह-
'गोली चलाओ लो,
अपनी ही बहिनों पर वीरता दिखाते हो,
गोलियां चलाते हो,
डूब कर मर जाओ-
चुल्लू भर पानी में।'
सुनकर यह थानेदार क्रोध से भुन गया,
धांय से सीने में मारदी गोली एक,
गोली खा 'लाल' ने आगे बढ़ाया पैर,
बोला लो मारो और,
धांय धांय तीन चार घुस गईं गोली और,
पर 'लाल पद्मधर' बढ़ता ही जाता था,
'इन्क़लाब ज़िन्दाबाद' कहता ही जाता था,
गिर गया जब, तब वह-
घुटनों के बल बढ़ा,

पड़ गया जब तब वह—
रेंग रेंग कर बढ़ा,
हत्यारे धांय धांय करते ही जाते थे,
'ख़ून ! ख़ून ! ख़ून ! ख़ून !' पृथ्वी चिल्लाती थी,
'भूख ! भूख ! भूख ! भूख !' भारत चिल्लाता था,
'प्यास ! प्यास ! प्यास ! प्यास !' चण्डी चिल्लाती थी,
'हाय ! हाय ! हाय ! हाय !' होती थी घर घर में,
'लाल पद्मधर' का रक्त तख़्त का प्यासा है,
'लाल पद्मधर' से लाल भारत है पृथ्वी है ।

शहीद 'रमेशचन्द्र आर्य'

(जेल में १९४३)

ख़ूनी तलवार ने-
ख़ूनी सरकार ने-
जाने निहत्थे की किस तरह हत्या की,
किस तरह चूसा रक्त ।

बोल ओ हत्यारे !
हो गई तेरी तृप्ति,
पी लिया उसका रक्त,
रँग लिये अपने हाथ ।

देख उस विधवा को -
डस लिया जिसका सुख,
तिल तिल कर जलती है जिसकी जवानी आज,
पीला है जिसका मुँह,
आंखों में जिसके जल,
ज़िन्दगी जिसकी शाप,
बोझ जो दुनिया पर ।

शहीद रमेशचन्द्र आर्य

क़त्ल कर बुझ न सकी शोणित ही पीकर प्यास,
क़ैदी निहत्थे की डाली कुवे में लाश,
लेकिन यह याद रख हत्यारे शासन-दण्ड-
एक दिन पापों का उत्तर भी देना है,
नीचे तिरंगे के उसने तजे हैं प्राण,
प्राणों की आहुति दे रम गया कण कण में,
उसकी समाधि पर-
चलकर चढ़ाओ फूल।

ध्वजा वह 'विजयगढ़' की,
सौरभ वह भारत का,
अभिमान आर्यों का-
स्वाधीन भारत की परिमल चाहता है।

शहीद 'राजनारायण मिश्र'

(फाँसी ६ दिसम्बर १६४४)

'अगस्त' की क्रान्ति ने-
कितने ही थानों को कर दिया भस्मसात्,
'बलिया' 'चिमूर' में जलती थी दुर्द्धर आग,
सत्ता थर्राती थी,
'लखीमपुर खीरी' में-
दहकी ग़दर की आग-
जिसकी चिनगारी से जल गया थानेदार।

षड्यन्त्रकारी सब छिप गये जहां तहां,
'राजनारायण' भी घर से फ़रार थे,
चक्कर में थी पुलिस-
वांरएट जारी था।

एक दिन 'मेरठ' में हो गये क़ैद ये,
इनका ही मित्र एक भेदिया बन बैठा,
मिल गया पुलिस से जा,
'मेरठ' के मस्तक पर पुतवादी कालिमा,

श्वेत मुख वाला दोस्त अन्दर से श्याम था,
लेकिन वह दोषी भी आज पछताता है।

'राजनारायण' पर चल गया मुक़दमा वह–
इनके थे सात घर–
बर्बाद कर डाले खोदकर पुलिस ने वे,
आख़िर फिर फांसी की सज़ा दी निहत्थे को।
फांसी से पूर्व एक बालक का पकड़े हाथ–
मिलने को आई जब सुन्दर सुकुमारी एक–
हाथों में चूड़ियां बजती थीं वीणा सी,
बिछवों की रुन भुन और आंखों में आंसू थे,
सोचती थी वह छवि–
दो दिन के बाद ये चूड़ियां टूटेंगी,
दो दिन के बाद ये बिछवे जल जायेंगे।

आंखों में आंसू देख–
सिंह के बालक ने–
'राज' के बालक ने–
गर्ज कर यह कहा–
'जननी! क्यों रोती है?
आज तो पिता जी ही चढ़ते हैं फांसी पर,
कल को मुझे भी तो चढ़ना है फांसी पर,

कल को तुम्हें भी तो चढ़ना है फांसी पर,
गोलियां खानी हैं तुमको भी, मुझको भी,
तब ही तो भारत यह स्वाधीन होगा मां !'
'राज नारायण' ने-
खोल दीं बाहें निज-
हर्ष से बालक को छाती से चिपटाया,
चूमा मुँह बार बार,
पीठ पर फेरा हाथ,
मस्तक पर फेरा हाथ,
पत्नी के सर पर हाथ रख कर फिर यह बोले-
'धन्य यह तेरा पुत्र,
धन्य यह मेरा पुत्र,
धन्य हो देवी ! तुम ।'

पत्नी ने चूमे पांव 'राज' पति वीर के,
और फिर हर्ष से चिल्लाकर यह बोली-
'धन्य हूँ नाथ ! मैं,
धन्य हूँ नाथ ! मैं,
जिसके हों ऐसे पति-
जिसके हों ऐसे पुत्र-
धन्य है देवी वह ।'

पत्नी ने, पुत्र ने अन्तिम प्रणाम कर–
पकड़ी फिर घर की राह,
पिँजरे में दोनों की बन्द फिर करदी चाह,
आई वह पुण्य तिथि–
जिस दिन शहीदों की सूची में चढ़ता नाम,
चढ़ गये फांसी पर 'राजनारायण' सिंह,
ख़ूनी सरकार ने हत्या से रँगे हाथ।

शहीद 'श्री देव सुमन'

(वीरगति २५ जौलाई १६४४)

देवों के देवता !

कुटिया के दीप्त दीप !

ऊंचे हिमालय दृढ़ !

भावुक तपस्वी वीर !

शृंगार भारत के !

अभिमान भारत के !

सुमनों के 'सुमन' शुभ !

तुम से जग सुरभित है,

तुमसे पथ विकसित है,

फूल अर्चना के तुम,

चढ़ गये मन्दिर में,

जननी के चरणों में,

धन्य धन्य भारत-भक्त !

जय हो तुम्हारी वीर ! जय हो तुम्हारी वीर ! जय हो तुम्हारी वीर !

तुमने हिलाया था हत्यारा 'टिहरी' राज्य,

शहीद श्री देव सुमन

वीर कवि ! तुमने ही घर घर में फूकी आग,
बढ़ते ही गये तुम,
चढ़ते ही गये तुम,
मंजिल की ओर वीर !
रुक न सके कोड़ों से,
रुक न सके तोपों से,
जेलों के अत्याचार,
राज्य की तलवारें,
थक गईं तुम से हार,
रचनात्मक कार्यक्रम करते ही गये तुम,
व्याप्त हो अणु अणु में ।

बोलो दिवंगत मुक्ति !
हत्यारे राज्य ने किस तरह हत्या की,
प्रतिध्वनि में अन्तर से-
बोली चिर सुमन शक्ति-
'एक दिन ख़ूनी ने कर लिया पथ में क़ैद-
डाला तनहाई में,
काल कोठरी में उस काला अँधेरा था,
बन्दी का जीवन शेष-
बीता अँधेरे में,
ऊपर से पड़ती थी बेंतों की मार रोज़,

ख़ूनी है 'टिहरी' राज्य,
तंग आ ज़ुल्मों से–
सत्तर दिन अनशन कर चल दिया दुनिया छोड़,
हत्यारे राज्य ने–
मिट्टी के तेल से फूका है मेरा शव,
अज्ञात कोने में हड्डियां गाड़ी हैं',
कहते ही कहते वह चुप हुई अन्तर्ध्वनि ।

आओ बलिवेदी पर–
गूथ कर सुमनों की माला चढ़ायें हम ।

शहीद 'महेन्द्र चौधरी'

(फाँसी ७ अगस्त १९४५)

'गांधी' के भक्त थे,
शक्ति के उपासक थे,
सत्याग्रह धर्म में-
कितनी ही बार ये-
पिँजरों में हुए बन्द।

कारा से छूटकर शादी इन्होंने की,
लेकिन दो दिन भी ये-
घुल मिल कर रह न सके,
सहसा फिर छिड़ गया विप्लव का ताण्डव नृत्य,
भूखे 'अगस्त' ने वीरों का मांगा रक्त,
दैत्यों का मांगा रक्त,
चल दिये निहत्थे भक्त-
झण्डे फहराते और जय जय के करते घोष।
अन्धी पुलिस ने इन वीरों पर किये वार,
डण्डों से, कोड़ों से,

आया निहत्थों में लाठियां खा खा जोश–
तज कर अहिंसा वे तुल गये हिंसा पर,
लाठियां बन्दूकें छीन लीं पुलिस से दौड़,
थाने में दे दी आग।

ईंट पत्थरों से युद्ध करते थे देश-भक्त,
ईंट के बदले में मारते पत्थर थे,
ईंटों से पिस पिस कर मर गया थानेदार,
दो दिन तक अपने ही हाथों में सत्ता थी,
लेकिन अंग्रेज़ों ने ऊपर से फेंके बम्–
बहिनों की लूटी लाज,
वीरों के फूंके घर,
सैनिक 'महेन्द्र' निज घर से फ़रार हो–
छिप गये आँखों से,
खोये छलावे से।

'बापू' की आज्ञा यह निकली फ़रारों को–
'स्वयम् हो जाओ क़ैद',
वीरवर 'महेन्द्र' भी थाने में जा पहुँचे,
कर लिया पुलिस ने क़ैद,
और फिर लखनऊ कारा में फाँसी दी।
जय जय शहीद की,
जय जय शहीद की।

शहीद 'ठाकुर दीवानसिंह'

(भूख हड़ताल से २३ अगस्त १६४५)

गाँव के भावुक भक्त—
क़ैद थे 'बरेली' में,
आठ वर्ष की थी क़ैद।
क़ैदी बिचारे की—
जेल के फाटक पर—
गीता जमा थी एक,
जेलर से माँगी वह,
'शेख़ अन्सारी' जो उस समय जेलर था,
क़ैदी बिचारे की गीता तक दी नहीं।
हार कर क़ैदी ने—
छेड़ दी भूख हड़ताल,
'चौदह अगस्त' थी वह,
इस पर उस जेलर ने—
पिटवाया 'वार्डर' से,
और वह हत्यारा—
जेलर की आज्ञा से—

पीटता जाता था,
श्रौर यह कहता था-
'माँ को बुलाले श्रब',
'बेटी को बुलवाले',
'उल्लू के पट्ठे श्रो',
श्रा गया 'डिप्टी' भी-
उसने भी 'ठाकुर' के चांटे लगाये दो,
प्रत्येक चाँटे पर-
बन्दी बिचारा वह-
कहता था मारो श्रौर,
नारे लगाता था,
इस पर उस जेलर ने-
मारे दो घूंसे श्रौर,
घूंसे खा क़ैदी ने नारे लगाये श्रौर,
इससे उस 'डिप्टी' को श्रा गया गुस्सा श्रौर,
डण्डे उड़ाये दो,
ठोकरें मारीं दो,
पीट कर जेलर ने श्राज्ञा दी 'वार्डर' को-
डालो तनहाई में।
वार्डर 'श्रमजद खां'-
ले गया धक्का दे-

डाला तनहाई में,
अगले दिन जेलर ने गीता भी भिजवादी,
लेकिन उस क़ैदी ने अनशन न छोड़ा अब,
धमकाया जेलर ने–
खालो अब खाना तुम–
कह दिया क़ैदी ने–
'अन्न अब खाऊँगा मुक्त होकर ही मैं',
इस पर उस जेलर को आ गया गुस्सा फिर–
बोला 'पिटोगे अब उससे भी ज़्यादा और।'

आया जब 'सुपरिन्टेन्डेन्ट'–
'ठाकुर' की पेशी की,
'बावन' की धमकी दी,
हार कर आज्ञा दी–
डालो नली से दूध,
जिस समय डाला दूध–
कितने ही 'वार्डर' थे,
कितने ही 'पक्के' थे,
बाँध कर वश में कर–
नलकी से नथनों में–
दूध की डाली धार,
हो गये मूर्छित वीर,

और फिर दो दिन बाद-
डेढ़ दो बजे के बीच-
चल दिये दुनिया छोड़ ।

बोलो शहीदों की आज सब मिलकर जय,
छीन लो अपना देश,
एक ही स्वर हो यह-
'अंग्रेज़ो ! जाओ अब,
छोड़ दो भारत देश,
छोड़ दो दिल्ली तुम,
एशिया छोड़ो तुम ।'

शहीद 'महेन्द्र गोपा'

(फाँसी १० नवम्बर १९४५)

विद्युत सी वाणी थी,
कौंध थी कम्पन में,
शुभ क्रान्ति कल्याणी शक्ति थी रग रग में,
भक्ति थी रग रग में,
पग पग पर पीड़ा में खेलती थी क्रीड़ा,
अपनी ग़ुलामी की व्रीड़ा थी आँखों में,
ज्वालामुखी से दृग—
परतन्त्रता की राख करने को जलते थे।

'अगस्त आन्दोलन' में—
'करने या मरने' का स्वर-शंख गूंजा जब—
शैशव से 'गोपा' भी बन गये विद्रोही,
टुकड़ी बनाई एक।

अँग्रेज़ी सत्ता ने—
ग्रामों में बनवाये 'ग्रामीण रक्षा-दल',
उस दल का मुखिया रोज़ करता था अत्याचार,

सबको सताता था।
कर दिया 'गोपा' ने क़त्ल उस ख़ूनी को,
पकड़े गये फिर ये।
ख़ून की धारा का इन पर मुक़दमा था,
क़ैदी अदालत ने सज़ा दी फाँसी की।

'राजेन्द्र बाबू' ने–
'राज्य परिषद्' में यह भेजा था प्रार्थना-पत्र-
निर्दोषी 'गोपा' को फाँसी का मत दो दण्ड।
किन्तु अँग्रेज़ों ने–
रद्दी में फेंके सब न्याय-रक्षा के पत्र,
'वायसराय' ने भी प्रार्थना ठुकराई।
'भागलपुर' में इस वीर सैनिक को फाँसी दी।
खेल है वीरों का फाँसी पर चढ़ जाना,
कायर ही डरते हैं 'करने से मरने से'।

शहीद 'सागरमल गोपा'

(जौहर ३ अप्रैल १९४६)

ज्योति सी भावुकता चित्रित थी आंखों में,
अङ्कित थी अधरों पर अन्तर की सच्चाई,
गोधन से सीधे और भव्य भावना से थे,
रहते थे 'जैसलमेर',
इच्छा थी आज़ादी।

'एजेन्ट पोलिटिकल एम० एस० एलाइन' ने-
इनको लिखे थे पत्र,
कुछ ख़ूनी लोगों ने-
झूठ सच कह सुनकर करवाया इनको क़ैद।
जेल में 'गोपा' को ज़ालिम रियासत ने-
बेंतों से पिटवाया,
चक्कियाँ पिसवाईं,
बेड़ियां पहिनाईं,
जिससे बिचारे के छिल गये दोनों पैर,
रक्त तक बह निकला,
माँस के कण कट कर गिरते थे पृथ्वी पर,
और इस हालत में-
सच्चे अहिंसक से, सीधे कबूतर से-
नालियाँ धुलवाईं, पाख़ाना उठवाया,

बर्फ पर बैठाया,
और फिर इसके बाद–
धमकी दी उसको जो–
लिख भी न सकता मैं,
कह भी न पाया वह,
शारदा जननी ने लिख दिया अन्तर में,
लेखनी लेकिन वह काग़ज़ पर लिख न सकी।
इस पर भी जब उसने छोड़ा न अपना प्रण–
बाँध कर रस्सी से–
डाल मिट्टी का तेल–
जीवित जला डाला,
लेकिन अहिंसा के सच्चे उपासक ने–
सब सहे अत्याचार, सब सहे दुर्व्यवहार।
अधजले 'गोपा' से–
'इन्स्पेक्टर साहब' ने–
रोकर यह मांगी भीख–
'लिख दो यह खुद जलकर मैंने दिये हैं प्राण'–
कह दिया 'गोपा' ने।

'गोपा' के गर्वित गीत गाओ सब गौरव से,
रौरव से दहके वह स्वाधीनता की आग,
मुक्ति बन रह जाये जग-मुकुट भारतवर्ष।

'जय हिन्द'

बढ़ चले तिरंगा झण्डा ले, 'दिल्ली सर करने' निकल पड़े ।
'जय हिन्द' हमारा नारा है, 'करने या मरने' निकल पड़े ॥

दुखिया जननी की कुटिया में–
हम दीप जलाने आज चले ।
परतन्त्र देश को किसी तरह–
आज़ाद कराने आज चले ॥
पश्चिम की छाती पर जलती–
'मैना' की चिता बुझायेंगे ।
हम 'लाल क़िले' की चोटी पर–
अपना झण्डा लहरायेंगे ॥

पैरों में पड़ी बेड़ियों पर, अंगार उगलने निकल पड़े ।
बढ़ चले तिरंगा झण्डा ले, 'दिल्ली सर करने' निकल पड़े ॥

फाँसी

क़ैदी सम्राट् 'बहादुर' की-
आहों से ये तूफ़ान चले।
चल पड़ा शहीदों का मरघट,
भारत के वीर जवान चले॥
हथकड़ियां तोड़ गिराने को-
केसरिया बाना पहिन चले।
या तो इस बार जलेंगे हम,
या अत्याचारी राज्य जले॥

वे विषधर, हम बन चले गरुड़, नागों को डसने निकल पड़े।
बढ़ चले तिरंगा झण्डा ले, 'दिल्ली सर करने' निकल पड़े॥

हम 'भगतसिंह' हम 'राजगुरू',
हम क्रान्तिदूत 'बिस्मिल' 'शेखर'।
जिनका 'दिल्ली' में क़त्ल हुआ-
हम उन 'दो बेटों' के दो सर॥
चल दिये आज बलिवेदी पर,
चल दिये फाँसियों पर चढ़ने।
चल दिये गोलियाँ खाने को,
चल दिये आज आगे बढ़ने॥

जननी की आँखों के आँसू, पल्ले में भरने निकल पड़े।
बढ़ चले तिरंगा झण्डा ले, 'दिल्ली सर करने' निकल पड़े॥

जय हिन्द

रग रग में घुसी ग़ुलामी में–
हम आग लगाने आज चले ।
जो बुझे पश्चिमी आँधी से–
वे दीप जलाने आज चले ॥
दुखिया बुढ़िया की शपथ हमें–
हम ताज छीन कर लायेंगे ।
नंगे भूखों की क़सम हमें–
भारत से इन्हें भगायेंगे ॥

सूना शमशान शहीदों का, हम दीपक धरने निकल पड़े ।
बढ़ चले तिरंगा झण्डा ले, 'दिल्ली सर करने' निकल पड़े ॥